अध्याय : ४ रागांग पूर्वी का विश्लेषणात्मक अध्ययन

इस अध्याय में राग पूर्वी के ऐतिहासिक विवरण के साथ साथ ग्रंथो मे प्राप्त जानकारी का संकलन शोधार्थी द्वारा करने का प्रयत्न किया गया है । रागांग पूर्वी के विश्लेषणात्मक अध्ययन के हेतू से शोधार्थी द्वारा विद्वानो के मत, स्वर विस्तार एवं बंदिशो का विश्लेषण प्रस्तुत किया है । पूर्वी थाट के अन्य रागो मे प्रयोग की जानेवाली पूर्वी रागांग वाचक स्वर संगतियों का विश्लेषण भी शोधार्थी द्वारा इस अध्याय मे किया गया है ।

४.१ राग पूर्वी

पूर्वी राग का १६वी शताब्दी से पुर्व कोई इतिहास नही मिलता है । उत्तरी भारत के प्रामाणिक ग्रंथ "राग तरंगिणी" मे गौरी का उल्लेख है, परन्तू यह पूर्वी नही है । "राग तरंगिणी" मे उल्लेखित पूर्वा, पूर्वी से किसी प्रकार से संबंधित नही था । दक्षिण के ग्रंथो मे पूर्वा या पूर्वी अन्य रागो के साथ संयुक्त रूप मे मिलते है । जैसे ...

१) स्वर मेल कलानिधि मे सारंगनाट मेल (बिलावल) का जन्य राग पूर्वगौड है ।

२) चतुरदंडी प्रकाशिका (१६४० ई.) मे वर्णित पूर्वगौड, गौडमेल का "लोकप्रिय" जन्य राग है ।

३) संगीतसारामृत (१७८३ ई.) पूर्वगौड शंकराभरण मेल मे बताया गया है ।

४) संगीत पारिजात (१६५० ई.) का पूर्वी सारंग आधुनिक पूर्वी मेल का राग है ।

इससे यह पता चलता है कि दक्षिण भारत मे पूर्वी का बडा व्यापक प्रचार था ।[1] "सदराग चंद्रोदय" दक्षिणी संगीत के आधार पर लिखा गया है । इसमे मालवगौड मेल (भैरव थाट) की पूर्वी का उल्लेख है ।

अकबर के समय मे ईरान तथा तुरान से संगीतज्ञ बुलाए गए थे । अमीर खुसरो से लेकरचार शताब्दी तक अरबी भारतीय संगीत का समन्वय होता रहा । इस प्रकार उत्तर भारतीय संगीत मे अरबी "मुकामों" की कुछ विशेषताए आ गई । इनमे से एक यह है कि

1. गोस्वामी, जी.एन./संगीत/पृ. ५

तीव्र मध्यम का अत्याधिक प्रयोग । बारह मुकामो मे सात मे तो हम दोनो मध्यम का प्रयोग पाते है । शुद्ध, धैवत, तीव्र मध्यम वाली पूर्वी "बुजुर्ग मुकाम" के बहुत ही निकट थी ।[1]

पूर्वी राग पर कवि लिखते है :

निद्रालसा गात्र कपटेन युक्ता,
कान्त स्मरन्ती विरहप्रपुर्ण ।
सौन्दर्य लावण्य कमलायताक्षी,
सा पूरवी शेष दिने तूरिये ।। [2]

यह राग एक सुन्दरी की कपट निद्रालसता और विरह, दोनो प्रकार के भाव को व्यक्त करता है । व्यवहारिक संगीतज्ञ अपने अंतः ज्ञान द्वारा श्रुतियों के प्रयोग से इन भावनाओं का समावेश अपने संगीत मे करते है ।

"पूर्वी" शब्द का अर्थ होता है "पूर्वकी" । अतः कई लोगो का यह मानना है कि पूर्वी राग का विकास किसी समय देश के पूर्वी खंडो मे प्रलित किसी राग से हुआ । और हो सकता है कि पहले इसका नाम "पूर्वी देशी" या "पूर्वी गौड" ही रहा हो । तेरहवी शताब्दी के उत्तरार्ध मे मिथिला तथा बंगाल मे "पूरबी"नामक राग प्रचलित था । इसका उल्लेख तेरहवी चौदहवी तथा पंद्रहवी शताब्दी के सभी बंगाल व मैथली संगीत ग्रंथकारो ने किया है । पूर्वी या पौरवी का वर्णन अन्य ग्रंथो के साथ ही "संगीत दोमादर", "बृहदधर्म-पूराण" एवं "राग तरंगिणी" इत्यादि मे भी मिलता है । सोलहवी और अठरावी शताब्दी के मध्य मे पार जाने वाले संगीत ग्रंथो की सामग्री पर भी विचार किया जाए वे है १) सद्रराग चन्द्रोदय २) राग विबोध ३) संगीत पारिजात

सद्राग - चन्द्रोदय मे वर्णित राग पूर्वी रे ध कोमल सहित आधुनिक भैरव थाट मे रखी गई है । राग विबोध मे पूर्वी तथा पौर्विका दो नामो का उल्लेख है । पूर्वी का थाट रे ध माना गया है, किन्तू पौर्विका का रे ध नि । संगीत पारिजात के रचियता ने प्राचीन एवं शास्त्रीय स्वरुपो मे सांमजस्य ढुंढने का प्रयास किया होगा । इसलिए उन्होने रे मं ध के नवोदित पूर्वी का नामकरण पूर्वी सारंग किया ओर रे ध वाली प्राचीन पूर्वी को लोप होने से

1. गोस्वामी, जी.एन./संगीत/पृ. ६
2. गोस्वामी, जी.एन./संगीत/पृ. ९

बचाया । फिर भी पूर्वी का रे ध स्वरूप अधिक न चल सका और बाद मे पूर्वी सारंग ही पुर्वी के नाम से प्रचलित हुआ । कालांतर मे प्राचीन एवं अर्वाचिन पूर्वी की विशेषताओ के सम्मिश्रण से रे म मं ध वाली पूर्वी का जन्म हुआ और यही आज तक प्रचलित है ।[1]

४.१.१ "श्री मल्लक्ष्यसंगीतम् मे प्राप्त राग पूर्वी का विवरण :

पूर्वीमेले - पूर्वी

पूर्वीतिनामके मेले स्यात्पूर्वी सुखदायिनी ।
आरोहे चावरोहेऽपि संपूर्णैव मता बुधैः ।।१।।
गांधारः संमतो वादी निषादो मंत्रितुल्यकः ।
गानमस्याः समादिष्टं दिनान्तेऽतिमनोहरम् ।।२।।
व्यवहारे प्रसिद्धैपा श्रीरागस्य कुटुंबिनी ।
उद्धरोऽस्या भुवेद्युक्तः श्रीरागानन्तरं ततः ।।३।।
प्रयोगः शुद्धमस्याऽत्र सह गेन मतो मनाक् ।
अवरोहे न मे भाति रक्तिहानिकरोऽप्यसौ ।।४।।
निसरिगमगस्वरै रागांग विशदीभवेत् ।
श्रोतारोऽपि सुखं तैश्च कुर्वन्ति रागनिर्णयम् ।।५।।
आदिशन्ति पुनः केचिद्रागेऽत्र तीव्र धैवतम् ।
तत्स्वरेण मते तेषां धनाश्रीभिभ्दवेत्स्फुटा ।।६।।
धैवतद्वंद्वमप्याहुः केचिदन्ये विपश्चितः ।
लक्ष्यमार्गमनुल्लंघ्य बुधः कुर्यात्स्वनिर्णयम् ।।७।।
पूर्वी पूर्णा तथा गांशा सायंकालोचिता ततः
ग्रंथे रागविबोधाख्ये सोमनाथेन भाषिता ।।८।।

तथैव रागमंजर्यां पूर्वी गौडीसुमेलजा ।

1. बिमल रॉय, एम.बी./संगीत/पृ. ५३

वर्णिता पुंडरीकेण सायंगेयाऽथ सांशिका ।।९।।

सायंगेयेषु रागेषु तीव्रमोऽपेक्षितो यतः

मन्ये तज्ज्ञैः समादिष्टौ रागेऽत्र मदृयमावुभै ।।१०।।

टिप्पनी

पूर्वीमेलोत्थिता रागा विभज्यन्ते द्विधा बुधैः ।

पूर्व्यंगाः पणमताश्चाथ षट् श्रीरागांगमंडिताः ।।११।।

श्रीगौरी मालवी टंकी वसंताख्या तथैव च ।

त्रिवेणीसहिता एते श्रीरागांगपरिष्कृताः ।।१२।।

पूर्वी रेवाऽथ जेताश्रीर्विभासो दीपकस्तथा ।

परजाख्यो मता एते सर्वे पूर्व्यंगमंडिताः ।।१३।। [1]

संक्षिप्त अर्थ :

पूर्वी नामक मेल से उत्पन्न पूर्वी अत्यंत सुखदायिनी रागिनी है । जिसका विद्वानो ने संपूर्ण संपूर्ण जाति के साथ वर्णन किया है । इस राग का वादि स्वर गंधार व संवादि स्वर निषाद है । गायन समय दिन का अंतिम प्रहर माना गया है । व्यवहार मे पूर्वी को "श्री" राग के परिवार की रागिनी माना जाता है । इसका गायन श्री राग के पश्चात होता है । इस राग मे अवरोह में गंधार के साथ शुद्ध मध्यम का अल्प प्रयोग भी किया जाता है, जो राग स्वरूप को नष्ट नहीं करता है ।

"नि़, सा रे॒ ग, म ग" यह पूर्वी का विशिष्ट रागांग है । जिससे राग व्यक्त होता है, और श्रोता भी इसके द्वारा राग को पहचानते है । कुछ लोग पूर्वी राग मे तीव्र धैवत लेने का विधान करते है, क्योंकि इससे, उनके मतानुसार धनाश्री (पूरिया धनाश्री)से इसकी भिन्नता स्पष्ट हो जाती है । कई विद्वानो ने पूर्वी मे दोनो धैवतो का प्रयोग भी बताया है । सोमनाथ ने राग विबोध ग्रंथ मे पूर्वी को संपूर्ण स्वरयुक्त गंधार वादि सायंकालिन राग के रुप मे वर्णित किया है । पुंडरिक विठ्ठल ने इसे गौडी मेलजन्य षड्ज वादि एवं सायंकालिन राग बताया है। सायंगेय रागो मे विद्वानो के मतानुसार तीव्र मध्यम महत्वपूर्ण है, एवं इस राग मे दोनो

1. भातखंडे, विष्णु नारायण/श्रीमल्लक्ष्यसंगीतम्/पृ.१२३

मध्यमो का प्रयोग बताया है । विद्वानो ने पूर्वी मेलजन्य रागो को दो वर्गो मे विभाजित किया है। पूर्वी अंगयुक्त छः राग माने है तथा श्रीअंग से युक्त भी छः राग माने गये है ।

श्री, गौरी, मालवी, टंकी, बसंत तथा त्रिवेणी ये सभी श्री अंग से युक्त राग है ।

पूर्वी, रेवा, जैताश्री, विभास, दिपक तथा परज ये सभी राग पूर्वी अंग से युक्त माने गये है ।

४.१.२. राग पूर्वी के संबंध मे विद्वानो के मत

१. पंडित विष्णु नारायण भातखंडे जी का मत :

पंडित भातखंडेजी के अनुसार पूर्वी थाट से उत्पन्न होनेवाले राग सुर्यास्त के एक डेढ घंटे पहले से गाने की प्रथा दिखाई देती है । पूर्वी थाट के रागो के पहले ग और नि कोमल लगनेवाले राग गाये जाते है । प्राचीनकाल के विद्वानो ने मुलतानी राग के द्वारा गंधार और निषाद कोमलवाले रागों से पूर्वी थाट के रागो मे प्रवेश करने का प्रयोजन किया है। मुलतानी राग कि खास बात यह है कि कोमल गंधार के अलावा अन्य सभी स्वर पूर्वी थाट के है । पूर्वी, श्री, गौरी, रेवा, मालवी, त्रिवेणी, टंकी, पूरिया धनाश्री, जेताश्री, दीपक, परज, बसंत, विभास यह पूर्वी थाट के राग है ।

पूर्वी यह पूर्वांगप्रधान सायंगेय राग माना गया है । इसका वादी स्वर गंधार है और संवादी स्वर निषाद है । पूर्वी थाट के रागों को सरलता कि द्रुष्टी से दो विभागों मे विभाजीत किया गया है । १) पूर्वी अंग के राग २) श्री अंग के राग । श्री, गौरी, मालवी, त्रिवेणी, टंकी, बसंत ये श्री अंग प्रयुक्त होनेवाले राग माने गये है । पूर्वी अंग के रागों मे गंधार और पंचम के योग्य प्रमाण मे प्रयोग पर ध्यान दिया जाता है और श्री अंग के रागों मे ऋषभ और पंचम के योग्य प्रमाण पर ध्यान दीया जाता है ।

पूर्वी राग कि मुख्य पकड या अंग "नि़ सा रे॒ ग, म ग यह है । इस मुख्य अंग को गुणी लोक अपने शिष्यों को ज्यादातर सिखाते थे और इसी स्वर संगति के प्रयोग से श्रोता तुरंत पूर्वी को पहचानते थे ऐसा अनुभव है । पूर्वी का आरंभ इस प्रकार करना

चाहिए । ग, रे सा, नि़ सा, नि़ नि़, सा रे ग, म ग, रे ग, म ग, रे सा, नि़ रे सा, इसमें नि सा रे ग और ग, म ग, रे ग इन स्वर संगतियों का जीतना जल्दी हो सकें कुशलता पूर्वक श्रोताओं के सामने प्रयोग करना चाहिए । इस राग मे सा, ग, प, नि यह न्यास के स्वर है । पूर्वी राग मे पंचम का अधिक प्रयोग होने पर पुरियाधनाश्री राग का आभास हो सकता है । पंचम का प्रयोग करते समय बीच बीच मे शुद्ध मध्यम युक्त स्वर संगतियों के प्रयोग से पुरियाधनाश्री की छाया दुर होती है । उदाहरण

- नि़ नि़ सा रे ग रे ग रे ग, म ग, नि़ रे ग, ग मं ग म ग, रे ग प प मं मं ग म ग, रे ग मं ध मं ग, रे ग, रे सा नि़ रे सा ।
- नि़ रे ग मं प, ग मं प, मं प, ध ध प, नि ध प, मं प, मं ग, म, ग, नि़ रे ग, मं ध मं ग रे ग, रे सा नि़ रे सा

पूर्वी राग मे अंतरा का उठाव इस प्रकार किया जाता है – ग ग मं ध मं सां, सां रें सां अथवा मं ग मं ध मं सां रें सां । पूर्वी मे शुद्ध मध्यम का प्रयोग मर्यादित और नियम के अनुसार करना चाहिए । शुद्ध मध्यम के अधिक प्रयोग से रागभंग हो सकता है। पूर्वी राग मे तीव्र मध्यम के प्रयोग के साथ शुद्ध मध्यम का प्रोग कभी कभी राग वैचत्रिय निर्माण करने के लिए किया जाता है । राग विबोध ग्रंथ मे "सोमनाथ" ने कहां है कि "पूर्वी पूर्णा सांता गांशा षङजग्रहा च सायह्ने । मालवगौडमेल" यहाँ इस राग को भैरव थाट का माना गया है परंतु "पूर्वी" सायंगेय होने के कारण उस मे तीव्र मध्यम का प्रयोग समझना चाहिए । शुद्ध मध्यम मुल थाट का स्वर "सोमनाथ" ने बदला नहि होगा ऐसा माना जा सकता है ।[1]

२. पंडित गिंडे जी का मत :

पंडित गिंडेजी के मतानुसार पूर्वी थाट मे श्री अंग और गौरी अंग समाये हुए है। पूर्वी अंग मे जो स्वर प्रधानता से उपयोग मे आते है वह गंधार, पंचम और निषाद है । गंधार इस राग मे महत्वपूर्ण स्वर है । ऋषभ और धैवत यह Linking notes है उस पर

1. भातखंडे, विष्णु नारायण/हिन्दुस्थानी संगीत पद्धती/पृ. ८,९,१२,१३

ठहराव नही किया जाता है । जीतने भी पूर्वी अंग के राग है उन मे ऋषभ और धैवत पर ठहराव नहि किया जाता है । इनका स्थान भी गौण होता है इन्हे linking notes कह सकते है। स्वर संगतियों को जोड ने के लिए इन स्वरों का प्रयोग किया जाता है । इस में अकसर नि़ रे कि संगति का प्रयोग किया जाता है । नि़ रे स्वर संगति का जवाब मं ध कि संगति है । पूर्वी अंग के रागों मे अधिकतर ग प कि संगति को भी महत्वपूर्ण माना गया है । प ग, मं प ध इस स्वर संगति का प्रयोग होता है तब नि़ सा रे ग के रूप मे उसका जवाब दिया जाता है । इसी प्रकार रें नि और नि मं यह भी राग वाचक संगति है । पूर्वी अंग के रागों मे रें नि ध मं ग इस स्वर संगति का ध मं ग रे सा इस प्रकार उसका सवाल जवाब होता है यह एक व्यापक रूप मे कहा जा सकता है ।

पूर्वी राग मे यह कहा जाता है कि तीव्र मध्यम के साथ शुद्ध मध्यम का प्रयोग भी इसमे कीया जाता है । शुद्ध मध्यम का प्रयोग गौण है न के बराबर है । अगर शुद्ध मध्यम पर अधिक जोर दिया जाएगा तो पूर्वी राग का "मीजाज" बीगड ने की संभावना है । पूर्वी मे नि रे ग रे म ग इस प्रकार मध्यम का जोरदार प्रयोग नही करना चाहिए । शुद्ध मध्यम का प्रयोग दो गंधार के बीच में किया जाता है । गंधार से गंधार के बीच मे थोडा सा इशारा शुद्ध मध्यम का किया जाता है ।

पूर्वी राग मे एक महत्वपूर्ण संगति है नि़ सा रे रे‍ग इसमे नि़ पर ठहराव करते हुए गंधार के प्रयोग मे कोमल ऋषभ का कण लीया जाता है । शुद्ध गंधार कोमल ऋषभ के लगाव से प्रयोग किया जाता है । उदा. प मं रे ग, ग -, रे सा, नि़ रे ग, रे ग, रे सा । गंधार हमेशा ऋषभ के साथ प्रयोग किया जाता है और यह पूर्वी का एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण स्वर लगाव है ।

पूर्वी के आरोह अवरोह इस प्रकार है :

- रे नि़ सा रे ग, रे ग म ग, प मं ध नि सा
- सां नि ध प, ध मं प मं ग रे ग, मं ग रे सा

संक्षिप्त मे राग पूर्वी कि महत्त्वपूर्ण स्वर संगतियाँ

– प म॑ ग ^{रे}ग, म॑ ग रे॒ सा, नि़ सा रे॒ ग, ग रे॒ मग, प म॑ मग, ध॒ प, प म॑ , मग, रे॒ ग म॑ ध॒ नि ध॒ प

– प ध॒ म॑ प म॑ ग ^{रे}ग, ध॒ प म॑ ग, नि ध॒ प म॑ ग, नि ध॒ प ध॒ म॑ प ग ^{रे}ग, ध॒ म॑ ग ग रे॒ सा

– सा नि़ रे॒ ग मग, प म॑ ग मग, ध॒ प ध॒ म॑ प म॑ ग ^{रे}ग, रे॒ ग प म॑ ग ^{रे}ग, नि़ रे॒ ग रे॒ ग प म॑ ग ^{रे}ग, म॑ ध॒ म॑ ग म॑ ग रे॒ सा

कई बंदिशों मे शुद्ध मध्यम का प्रयोग नही किया गया है । इस राग मे शुद्ध मध्यम का अल्प प्रयोग समझ मे आता है । इसलिए सहि स्वर लगाव के लिए शुद्ध मध्यम कि सिर्फ एक छटा दिखानी चाहिए ।[1]

३ . पंडित रामाश्रय झा जी का मत :

पंडित रामाश्रय झा के अनुसार राग पूर्वी, पूर्वी थाट का आश्रय राग एवं रागांग पद्धति के अनुसार पूर्वी अंग का रागांग राग है । यह एक सायं संधी प्रकाश तथा सम्पूर्ण जाति का र ाग है । इसका संक्षिप्त स्वरूप इस प्रकार है :

सा नि़ रे॒ ग, म॑ ग रे॒ ग, रे॒ म ग, म॑ ग रे॒ सा, नि़ ध़॒ नि़॒ रे॒ ग, रे॒ ग म॑ प, ध॒ प म॑ प म॑ ग म ^{रे}ग, रे॒ ग म॑ प ध़॒ म॑ ग, रे॒ ग रे॒ सा ग म॑ प ध॒ प, म॑ ध॒ नि सां, सां नि रें॒ नि ध॒ प, ध॒ प म॑ प ग म ^{रे}ग, म॑ ध॒ म॑ ग, रे॒ ग रे॒ सा, नि़ ध़॒ नि़ सा रे॒ ग

इस स्वरूप को देखने से यह निश्चित हो जाता है कि पूर्वी मे अन्य किसी राग का मिश्रण नही है । तथा अन्य शुद्ध रागो की तरह यह भी एक शुद्ध राग है । रागांग की दृष्टि से इस राग के पूर्वांग और उत्तरांग मे अलग अलग रागांग वाचक स्वर समूहो का प्रयोग किया जाता है वह इस प्रकार से है :

पूर्वांग मे – नि़ रे॒ ग, म॑ ग रे॒ ग, म॑ प म॑ ग म ^{रे}ग, रे॒ सा नि़ ध़॒ नि़ सा रे॒ ग

उत्तरांग – प, म॑ ध॒ नि ध॒ सां, नि रें॒ नि ध॒ – प

1. गिंडे, के.जी./लेक्चर डेमॉन्सट्रेशन/पूर्वी अंग राग/मीरा म्युजिक

पूरिया धनाश्री, श्री, बसंग, परज, जैतश्री, ललिता गौरी, ललित (कोमल धैवत) इत्यादि रागो मे कही न कही उपरोक्त पूर्वी राग के रागांग वाचक स्वर समूहो का कोई न कोई स्वर समूह का प्रयोग अवश्य किया जाता है । इन रागो के उत्तरांग के आलाप एवं ताने पूर्वी राग से प्रभावित रहते है ।

उदा.- मं ध सां, मं ध नि सां, मं ध रें सां, ग मं ध नि रें गं रें सां, ध नि रें नि ध प, मं प ध मं ग, नि ध प ध प मं प मं ग इत्यादि ।

उत्तर भारतीय शास्त्रीय संगीत वर्तमान काल मे थाट एवं रागांग पद्धति पर आधारित है । और भैरव, बिलावल, कल्याण, तोडी, काफी इत्यादि प्रारंभिक राग माने गए है । इन प्रारंभिक रागांग रागो का मिश्र व संकिर्ण रागो पर प्रभाव दिखाई देता है । इसलिए बसंत, श्री, परज इत्यादि रागो को प्रारंभिक एवं आश्रय राग पूर्वी से प्रभावित माना गया है ।

राग पूर्वी का समप्राकृतिक राग मुख्य रूप से "पूरिया धनाश्री" है परन्तू राग पूर्वी मे ग – नि वादि संवादि दोनो मध्यम का प्रयोग और पूरिया धनाश्री मे पंचम, षड्ज वादि संवादि और मं रे ग प. इस प्रकार के स्वर समूह की संगति की भिन्नता होने से ये दोनो राग भिन्न दिखते है । उत्तरांग के स्वरूप मे इन दोनो र ागो मे अधिक समानता दिखाई देती है । परन्तू दोनो राग पुर्वांग प्रधान है, इसलिए पूर्वांग के स्वर समूहो का ध्यान पूर्वक उपयोग आवश्यक है ।

पूर्वी राग मे प मं ग म ग, इस प्रकार जब दोनो मध्यम युक्त स्वर संगति का प्रयोग होता है तो कुछ समय के लिए राग परज का आभास उत्पन्न होता है । परन्तू इस स्वर संगति मे गंधार का स्वर लगाव पूर्वी और परज की भिन्नता को स्पष्ट करता है ।

उदा. – प मं ग म रे-ग इस अंतिम गंधार को ऋषभ से कण युक्त आरोहात्मक क्रम मे उच्चारित किया जाता है । यह स्वर लगाव सायंगेय रागो का लक्षण है । इसी स्वर समूह का परज राग मे "प मं ग म ग, प ध प ध मं प मं ग म ग, यह स्वर समूह कालिंगडा अंग से गाया जाता है जिसमे प्रातः गेय राग के लक्षण दिखाई देते है । इसी कारण से अंतिम गंधार का प्रयोग ऋषभ के कण से नही लिया जाता है । इस प्रकार एक

ही स्वर समूह दोनो रागो मे प्रयोग होने पर भी उच्चारण एवं लगाव भेद के कारण दोनो भिन्न है ।

पूर्वी राग में स्वरों का प्रयोग :

सा – इस राग के चलन मे षड्ज को छोडकर नि़ रे ग एवं रें नि ध प इन स्वर संगतियों का प्रयोग किया जाता है ।

रे – नि़ रे ग, ग रे सा

ग – नि़ रे ग, मं ग रे ग, मं प मं , ग मं रे ग, मं ध मं ग , रे ग रे सा

म – प मं ग म रे ग एवं ग रे मग

मं – ग मं प, मं प ध मं प मं ग, मं ध नि ध प मं ग

प – मं प, ग मं प, रे ग मं प ध मं प, ध प, मं ध नि रें नि ध प, मं ध सां नि ध नि रें नि ध प,

ध – मं ध नि ध नि रें नि ध – प

नि – प मं ग रे ग म ध नि, रें नि ध प मं ध नि [1]

४.१.३. राग पूर्वी का स्वर विस्तार एवं रागांग पूर्वी का विश्लेषण

१. स्वर विस्तार – (पंडित भातखंडे : हिन्दूस्तानी संगीत पद्धति)

- ग रे सा, नि़, रे सा, नि़ नि़, सा रे ग, म ग, रे ग ग , रे सा, नि़ रे सा
- नि़ नि़, सा रे ग, रे ग, नि़, रे ग, ग म रे ग, नि़ रे ग म ग, मं म ग म ग, नि़ रे ग, मं ग, ग रे सा, नि़ रे सा
- नि़ नि़, रे नि़ ध़ प़, मं़ ध़ नि़ ध़ प़, मं़ प़, ध़ नि़, ध़ प़, नि़ सा, नि़, सा, रे ग, मं ग, रे ग, रे सां, नि़, रे सां
- नि़ नि़, सा रे ग, म ग, ग म मं ग म ग, रे ग, ध, प, मं मं ग म ग, रे ग मं प मं ग, रे ग, रे सा, नि़, रे सा
- सा, नि़ सा, नि़ रे ग रे सा, रे ग रे सा, नि़ रे ग म रे ग, रे सा, मं मं ग ग,

1. झा, रामाश्रय/अभिनव गीतांजली/पृ.६२,६३,६४

रे॒ ग रे॒ सा, प म॑ ग, म॑ ग, रे॒ ग म॑ ध॒ म॑ ग, रे॒ ग, रे॒ सा नि रें॒ नि ध॒ प, म॑ प, नि ध॒ प,

म॑ प ध॒ म॑ प, म॑ ग , म ग, रे॒ ग, ध॒ म॑ ग, म ग, रे॒ ग, ध॒ म॑ ग, ग, रे॒ सा, नि़, रे॒ सा

- नि रे॒ ग म॑ प, म॑ प, ध॒ प, म॑ प नि ध॒, प, म॑ प ध॒ म॑ प म॑ ग म ग, नि रें॒ नि ध॒, प,

  म॑ म॑ ग, म ग, रे॒ ग म॑ नि म॑ म॑ , ग, रे॒ ग, रे॒ सा, नि़ रे॒ सा

- ग ग म॑ ध॒ म॑ , सां, सां, नि रें॒ सां, नि रें॒ गं रें॒ सां, नि नि, रें॒ नि ध॒ प, म॑ प, म॑ ध॒, नि,

  ध॒ नि ध॒ प, म॑ म॑ , प, नि ध॒ प, म॑ ध॒, म॑ ग, म ग, नि़ रे॒ ग, म॑ ध॒ म॑ ग, रे॒ ग, रे॒ सा,

  नि़, रे॒ सा

- सा सा, प प, म॑ ध॒ प, म॑ प, नि ध॒ प, सां, नि ध॒ प, म॑ म॑ ध॒ ध॒ म॑ म॑ ग ग, म॑ ग,

  रे॒ ग म॑ ध॒ म॑ ग, रे॒ ग, रे॒ सा

- ग ग, म॑ ध॒, सां, सां, नि रें॒ सां, गं रें॒ सा, नि रें॒ गं म॑ ग, रें॒ सां, नि रें॒ गं रें॒ सां, नि,

  रें॒ नि ध॒ प, म॑ म॑ ध॒, रें॒ नि ध॒ प, म॑ ध॒ म॑ , म॑ ग रे॒ ग, ध म॑ ग, रे॒ ग, रे॒ सां,

  नि़, रे॒ सा [1]

विश्लेषण :

इस स्वर विस्तार मे पूर्वी की रागांग वाचक स्वर संगतियों का अद्भूत रूप से प्रयोग दिखाई देता है । पूर्वी रागांग राग और आश्रय राग है और इस विस्तार मे कई स्वर संगतियों का प्रयोग दिखाई देता है । जो पूर्वी थाट के अन्य रागों मे भी पाई जाति है । नि़ नि़, सा रे॒ ग, म ग, रे॒ ग ग, रे॒ सा इस पूर्वी कि रागांग वाचक स्वर संगति का प्रयोग किया गया है । ग म म॑ ग म ग रे॒ सा इस मे दोनों मध्यमों का प्रयोग किया गया है । रें॒ नि ध॒ प इस पूर्वी कि महत्वपूर्ण स्वर संगति का प्रयोग मंद्र और तार सप्तक मे किया गया है । नि़ नि़ सा रे॒ ग, म ग रे॒ ग, रे॒ सा इस स्वर संवति को हम पूर्वी कि प्रमुख रागांग वाचक स्वर संगति कह सकते है । इसके अलावा अन्य महत्वपूर्ण स्वर संगतियां जो पूर्वी राग से प्राप्त होती है और इस मे से अधिकतर पूर्वी अंग के रागो मे प्रयुक्त होती है वह इस प्रकार है :

१) नि़, रे॒ सा

२) नि़ रे॒ ग

1. भातखंडे, विष्णु नारायण/हिंदुस्थानी संगीत पद्धती/पृ. ३८

३) रें ग मं ध मं ग – पूरिया धनाश्री मे प्रयुक्त होती है

४) रें नि ध प – पूरिया धनाश्री और श्री मे प्रयुक्त होती है

५) ध नि ध प, नि ध प – परज मे प्रयुक्त होती है

६) ग ग, मं ध, सां – बसंत मे प्रयुक्त होती है

७) सा सा, प प, मं ध – श्री में प्रयुक्त होती है

८) ध मं ग – पूरिया धनाश्री, श्री मे प्रयुक्त होती है

इस प्रकार स्वर विस्तार के विश्लेषण से रागांग वाचक स्वर संगतियाँ प्राप्त होती है । कई ऐसी स्वर संगतियाँ भी प्राप्त होती है जो पूर्वी अंग के दो या तीन रागों मे प्रयोग कि जाती है और इन स्वर संगतियों का उगम स्थान पूर्वी का स्वर विस्तार है । पूर्वी राग के उत्तरांग के श्रेत्र से पूरिया धनाश्री, बसंत, गौरी, श्री, परज जैसे राग अधिक प्रभावित दिखाई देते है ।

२. स्वर विस्तार – (पंडित रामाश्रय झा : अभिनव गीतांजली)

- सा, ऩि रे ग, मं ग रे ग, रे सा, ऩि ध़ ऩि सा रे ग, रे ग मं ग म रे–ग, रे सा रे ऩि ध़ प़ मं़ ध़ ऩि सा, ऩि रे सा ।
- ग रे सा ऩि रे सा, ध़ ऩि रे ऩि ध़, ऩि, ध़ प़, मं़ ध़ ऩि सा, ध़ नि सा, ध़ ऩि सा ग, रे ग मं ग मं रे ग, मं प, प मं ग, रे म ग रे ग मं ग रे सा, ऩि ध़ ऩि रे सा ।
- नि रे ग मं प, ग मं ध प, ध मं प मं ग मं ग रे ग, रे म ग, रे ग मं प, मं ध नि ध ध प, ध मं प ग, रे ग मं ध प, ऩि रे ग मं ध नि नि ध ध प, मं प ध मं ग, रे ग मं प मं ग म रे–ग, मं ग रे सा, ऩि ध़ ऩि सा रे ग ।
- प मं ग मं ग रे ग, रे ग रे ग मं प, ग मं ध नि ध प, मं ध नि रें नि ध ध प, मं ध सां, नि रें सां, नि रें गं, गं रें सां, रे नि ध नि ध ध प मं प ध मं ग रे ग मं प मं ग ग म रे–ग, ऩि रे ग मं ध नि सां ध नि रें नि ध नि ध प मं ग म रे–ग, रे ग मं ग रे सा, ध़ नि सा रे ग ।

– नि़ रे ग म॑ ध प, म॑ ध नि ध म॑ ध सां, नि रें सां, नि रें गं, रें सां, ध नि रें नि ध प, म॑ ध सां नि रें गं, रे गं म॑ गं म॑ गं, रें गं म॑ पं म॑ गं रें गं रे सां, नि रें नि ध प, म॑ ध ध प, म॑ ग म रे ग, रे ग म॑ ध नि रें सां नि ध प, म॑ ध सां नि ध प, नि ध प, ध प म ग, रे ग म॑ ध म॑ ग म रे म (रे)ग, ग म॑ प म॑ ग रे ग रे सा, नि़ ध़ नि सा रे ग।[1]

विश्लेषण :

इस स्वर विस्तार मे भी रागांग वाचक स्वर संगति नि़ सा रे ग, रे ग म॑ ग म (रे)ग का प्रयोग दिखाई देता है । ग म ग इस स्वर संगति मे अंतिम गंधार पर ऋषभ का कण अत्यंत महत्वपूर्ण है जीसका प्रयोग इस स्वर विस्तार मे किया गया है । पूर्वी राग कि विशिष्ट रागांग वाचक स्वर संगतियों के साथ साथ अन्य महत्वपूर्ण संगतियों द्वारा राग का संपूर्ण विस्तार किया गया है ।

४.१.४. राग पूर्वी की बंदिशे एवं रागांग पूर्वी का विश्लेषण

१. नैया मोरी पार करो (क्रमिक पुस्तक मालिका)

ताल : विलंबित त्रिताल

स्थायी : नैया मोरी पार करो रे, अब निजामी

अंतरा : तुम हो पीर गंभीर ध्यान अंतरजामी [2]

स्थायी

(सा)रे	ग	(ध)गम॑म	गम॑	(रे)ग	रे	सा	–	रेरेसानि़सा	नि़	–	सारे	ग	म	ग	–
नै	ऽ	ऽऽऽ	याऽ	मो	ऽ	री	ऽ	पाऽऽऽऽ	ऽ	ऽ	रक	रो	ऽ	रे	ऽ
3				x				2				o			
गम॑रेग	प	–	,पम॑	ध	–	प	–	(म॑)प	ध	म॑	पम॑	ग	ग	ग	–
अऽऽऽ	ब	ऽ	,निऽ	जा	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽऽ	ऽ	ऽ	मी	ऽ
3				x				2				o			
(सा)रे	ग	(ध)गम॑म	गम॑												
नै	या	ऽऽऽ	ऽऽ												
3															

1. झा, रामाश्रय /अभिनव गीतांजली/पृ.६५
2. भातखंडे, विष्णु नारायण/क्रमिक पुस्तक मालिका/पृ.२५२

<u>**अंतरा**</u>

(ध)म॑	ग	(ध)म॑	ध़	(नि)सां	-	सां	,सांनि	रें	-	सां	सां	निध	रेंनिनि	ध	प
तु	म	हो	ऽ	पी	ऽ	र	,गंऽ	भी	ऽ	ऽ	र	ग्याऽ	ऽऽ	ऽ	न
3				x				2				o			
प	म॑	ग	म॑ध	रें	नि	ध	प	(म॑)प	ध	म॑	पम॑	ग	म	ग	-
अं	ऽ	ऽ	तर	जा	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽऽ	ऽ	ऽ	मी	ऽ
3				x				2				o			
(सा)रे	ग	(ध)गम॑म॑	गम॑												
नै	या	ऽऽऽ	ऽऽ												
3															

विश्लेषण :

इस बंदिश की स्थाई कि स्वरलिपी मे नि़ – सा रे ग म ग – इस रागांग वाचक स्वर संगति का प्रयोग किया गया है । अंतरे कि उठान म॑ ग म॑ ध (नि)सां – सां से किया गया है जो पूर्वी अंग कि एक महत्वपूर्ण स्वरसंगति है । अंतरे कि स्वरलिपी मे भी (म॑)प ध म॑ पम॑ ग म ग (सा)रे ग इस महत्वपूर्ण रागांग वाचक स्वर संगति का प्रयोग किया गया है । इस ख्याल के बंदिश के शब्दों द्वारा एक भक्त ने कि हुई अपने ईष्ट देव की आर्ततापूर्ण विनंती दिखाई देती है । इस भवसागर से जीवन रूप नई को पार लगाने कि पुकार इस बंदिश द्वारा की गई है । यह भावना पूर्वी के राग स्वरूप और रसानुकुल है ।

२. बनत बनाऊँ (क्रमिक पुस्तक मालिका)

ताल : त्रिताल

स्थायी : बनत बनाऊँ बन नहिं आवे, हरि के बिना हे आलि

अंतरा : कारि करूँ अब कैसे समझाऊँ, समझत नाहि न हे आलि [1]

1. भातखंडे, विष्णु नारायण/क्रमिक पुस्तक मालिका/पृ.२३८

स्थायी

															(सा)नि़
															ब
												०			
रे	(म)ग	प	प	ध	प	-	प	(म)प	ध	म	पम	ग	म	ग	ध
न	त	ऽ	ब	ना	ऽ	ऽ	ऊँ	ब	न	न	हिंऽ	आ	ऽ	वे	ह
3				x				2				०			
म	ग	-	रे	सा	-	-	-	नि़रे	गम	पध	पम	ग	रे	सा	(सा)नि़
रि	के	ऽ	बि	ना	ऽ	ऽ	ऽ	हेऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽ	आ	लि,	ब
3				x				2				०			

अंतरा

(ध)म	ग	म	धम	(ध)सां	-	रें	सां	(सां)नि	ध	निरें	निध	नि	ध	प	(प)ध
का	ऽ	रि	कऽ	रूँ	ऽ	अ	ब	कै	से	सऽ	मऽ	झा	ऽ	ऊँ	स
3				x				2				०			
म	ग	-	म	ग	रे	सा	सा	नि़रे	गम	पध	पम	ग	रे	सा	(सा)नि़
म	झ	ऽ	त	ना	ऽ	हिं	न	हेऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽऽ	ऽ	आ	लि,	ब
3				x				2				०			

विश्लेषण :

इस बंदिश की स्थाई मे (म)प ध म पम ग म ग ध म ग – रे इस प्रकार पूर्वी रागांग का प्रयोग दिखाई देता है । अंतरे कि स्वरलिपी मे नि ध निरें निध नि ध प यह संवादि स्वर निषाद कि सहायता से रागंग वाचक स्वर संगति का प्रयोग किया गया है । स्वरलिपी के अवलोकन से हमे पूर्वी राग कि अन्य महत्त्वपूर्ण स्वर संगतियाँ प्राप्त होती है जो निम्नरूप से है :

१) नि़ रे ग मं प प ध प

२) मं ग मं धमं धसां - रें सां

३) मं ग रे सा

यह स्वर संगतियाँ पूर्वी अंग एवम् पूर्वी थाट के कई रागों मे प्रयोग कि जाती है जिसका उगम हमे पूर्वी राग के स्वरूप से प्राप्त होता है । पूर्वी का विशेष रागांग वाचक दोनों मध्यम का प्रयोग और अन्य पूर्वी अंग कि महत्त्वपूर्ण स्वर संगतियाँ इस स्वरलिपी से प्राप्त होती है । इस बंदिश के शब्दों मे हरि दर्शन न होने के कारण एक गोपी या भक्त कि मन कि व्याकुलता का सुंदर वर्णन किया गया है । पूर्वी के स्वरूप के साथ इस व्याकुल अवस्था का वर्णन श्रोताओं के मन को उस अवस्था का अनुभव करने मे समर्थ है ।

३. आवन कहि गए (क्रमिक पुस्तक मालिका)

ताल : त्रिताल

स्थायी : आवन कहि गए अगम भईलवा, उनको भुज फरकत है, आँख मोरि बाई

अंतरा : सकुन बिचारो रे मोरे बमना, बेग मिलनवा होय,

सदा रँगीले आलमगीर साँई.[1]

स्थायी

मं				म				ग							
प	ध	मं	पमं	ग	म	ग	रे	म	ग	-	रे	ग	मं	प	-
आ	ऽ	व	नऽ	क	हि	ग	ए	अ	ग	ऽ	म्भ	इ	ल	वा	ऽ
o				3				x				2			
मं		ध						ध				रे			
प	प	मं	-	ग	म	ग	-	मं	मंध	मं	ग	ग	रे	सा	-
उ	न	को	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	भु	जऽ	फ	र	क	त	है	ऽ
o				3				x				2			
								ध		ध		मं			
नि़	रे	ग	मं	प	-	-	-	मं	-	मं	-	ग	म	ग	-
अँ	खि	मो	रि	बा	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ई	ऽ
o				3				x				2			

1. भातखंडे, विष्णु नारायण/क्रमिक पुस्तक मालिका/पृ.२३९

अंतरा

ग				ध				ध							
म॑	म॑	ग	ग	म॑	-	ध	म॑ध	सां	-	सां	सां	सां	रें	सां	-
स	कु	न	बि	चा	ऽ	रो	ऽऽ	रे	ऽ	मो	रे	ब	म	ना	ऽ
x				2				o				3			
नि								ध				नि			
सां	-	सां	सां	नि	ध	नि	सांरें	नि	-	-	ध	ध	-	प	प
बे	ऽ	ग	मि	ल	न	वा	ऽऽ	हो	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	य
x				2				o				3			
म॑	ध		ध												
प	म॑	-	म॑	ग	म	ग	-	नि़	रे	ग	म॑	प	-	-	प
स	दा	ऽ	रँ	गी	ऽ	ले	ऽ	आ	ऽ	ल	म	गी	ऽ	ऽ	र
x				2				o				3			
म॑		ध		म॑											
प	-	म॑	-	ग	म	ग	-								
साँ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ई	ऽ								
x				2											

विश्लेषण :

इस बंदिश कि स्वरलिपी कि शुरूवात ही पूर्वी के विशिष्ट रागांग वाचक स्वर समुह जिसमे दोनो मध्यम का प्रयोग किया जाता है, के प्रयोग से हुई है । प ध म॑ पम॑ ^{म}ग म ग रे ^{ग}म ग यह रागांग वाचक स्वर संगति तुरंत पूर्वी का स्पष्ट कर देती है । पूर्वी रागांग कि दृष्टि से इस बंदिश कि स्थाई कि हरएक पंक्ति कि स्वरलिपी मे दोनो मध्यमों का अद्‌भूत प्रयोग दिखाई देता है । बंदिश के द्वारा राग स्वरूप कि शुद्धता के दर्शन हमें इसके द्वारा होते है । अंतरे कि अंतिम दो पंक्तियों मे भी शुद्ध मध्यम युक्त स्वर संगतियों का प्रयोग किया गया है । पूर्वी राग कि अन्य महत्वपूर्ण स्वर संगतियाँ जो हम इस स्वलिपी द्वारा प्राप्त होती है । वह निम्नरूप से है :

१) रे ग म॑ प   २) म॑ ग $^{रे}$ग रे सा   ३) नि़ रे ग म॑ प

४) ^{ग}म॑ म॑ ग ग ^{ध}म॑ - ध म॑ध सां   ५) सां रें सां

६) नि ध नि ७) ^ध^नि - - ध ^नि^ध - प

उपरोक्त सभी स्वर संगतियाँ पूर्वी के स्वरूप का महत्त्वपूर्ण अंग है । सुक्ष्म रूप से विश्लेषण करने पर पूर्वी अंग एवम् पूर्वी थाट के रागों मे कहि न कहि इन स्वर संगतियों का प्रयोग दिखाई देता है । इसका विश्लेषण आगे शोध प्रबंध मे किया जाएगा । बंदिश के शब्दों पर ध्यान देने से यह दिखाई देता है कि संध्याकाल होने पर भी प्रियतम के घर न लोट ने पर प्रियतमा अति व्याकुल और चिंतित है । इस मनोदशा का वर्णन इस बंदिश मे किया गया है जो रागानुरूप है ।

४. मोजा माणी हो (क्रमिक पुस्तक मालिका)

ताल : त्रिताल

स्थायी : मोजा माणी हो थें, माणीगर रसीया रैण समै
राणी सोच त्रसाणि हो

अंतरा : भाँग डली पिरो सुख, करो मनरंग में
साडुला रे आँचल छणि हो [1]

स्थायी

	ध	ध						ग							सा
नि	नि	मॅ	ग	गमॅ	रेग	-	रे	सा	-	-	-	-	-	-	नि
मौ	ऽ	जा	ऽ	माऽ	ऽऽ	ऽ	णी	हो	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	थें
o				3				x				2			
				ध					रें					ध	
सा	सा	ग	ग	म	ध	नि	सां	सां	नि	ध	प	प	-	मॅ	ग
मा	णी	ग	र	र	सि	या	ऽ	रै	ऽ	ण	स	मै	ऽ	रा	ऽ
o				3				x				2			
				मॅ	ध										
मॅ	रे	ग	मॅ	नि	नि	मॅ	ग	गमॅ	रेग	-	रे	सा	-	-	-
णी	ऽ	सों	ऽ	च	ऽ	त्र	ऽ	साऽ	ऽऽ	ऽ	णि	हो	ऽ	ऽ	ऽ
o				3				x				2			

1. भातखंडे, विष्णु नारायण/क्रमिक पुस्तक मालिका/पृ.२४५

अंतरा

^ध^म	मम	म	ग	^ध^म	-	ध	म	सां	सां	सां	सां	सां	रें	सां	-
भाँ	गऽ	ली	पि	वो	ऽ	सु	ख	क	रो	म	न	रं	ग	में	ऽ
०				3				x				2			
^सां^नि	रें	गं	रें	सां	-	रें	सां	-	^म^प	-	प	^ध^म	ग	मरे	ग
सा	लु	डा	रे	आँ	ऽ	च	ल	ऽ	छा	ऽ	णि	हो	ऽ	ऽऽ	ऽ
०				3				x				2			

विश्लेषण :

पंडित गींडेजी ने इस बंदिश का अपने व्याख्यान मे विशेष उल्लेख किया है । उनके मतानुसार पूर्वी मे शुद्ध मध्यम के विशिष्ट प्रयोग को न करने पर भी पूर्वी का स्वरूप स्पष्ट किया जा सकता है । उदाहरण स्वरूप उन्होने इस बंदिश का उल्लेख किया है । इस बंदिश कि स्वरलिपी के ध्यानपूर्वक अवलोकन से यह दिखाई देता है कि शुद्ध मध्यम का प्रयोग इस बंदिश कि स्वरलिपी मे नहि किया गया है । इससे हमे पूर्वी की अन्य महत्वपूर्ण संगतीयाँ जिनके प्रयोग से पूर्वी का स्वरूप स्पष्ट किया जा सकता है प्राप्त होती है। यह स्वर संगतियाँ इस प्रकार है ।

१) ^ध^नि ^ध^म ग　　२) ग ग, म ध नि सां

३) सां नि ध प　　४) प - म ग म रे ग म

५) गम रेग - रे सा　　६) म ग धम - ध म सां सां

७) सां रें सां　　८) नि रें गं रें सां

विद्वानों का हमेशा यह मत रहा है कि एक राग कि अलग अलग बंदिशों के विश्लेषण से राग स्वरूप अधिक स्पष्ट होता जाता है । इस बंदिश के अभ्यास से पूर्वी कि दोनों मध्यम युक्त रागांग वाचक स्वर संगति का प्रयोग न होते हुए भी पूर्वी राग का स्वरूप स्पष्ट किया गया है । उपरोक्त प्राप्त अलग अलग स्वर संगतियाँ पूर्वी राग के स्वरूप का महत्त्वपूर्ण अंग है । पंडित गींडेजी के मतानुसार शुद्ध मध्यम का प्रयोग पूर्वी

में अत्यंत अल्प, एक छटा के रूप से किया जाता है । पूर्वी राग का स्वरूप शुद्ध मध्यम के प्रयोग के बिना भी स्पष्ट हो सकता है यह सिद्ध होता है ।

५. हे मथुरा न जैहो (आगरा घराने की बंदिश)

ताल : त्रिताल

स्थायी : हे मथुरा न जैहो मोरा कान, मना करे गोपीयाँ ।

अंतरा : हे मथुरा तेरी गोकुल तेरी ब्रीज में मची है धूमधाम ।।[1]

स्थायी

रे	ग	म॑	ग	रे	सा	रे	ऩि	रे	ग	प	-	प	ध	प	म॑
हे	ऽ	म	थु	रा	न	ऽ	जै	हो	मो	रा	ऽ	का	ऽ	ऽ	ऽ
2				o				3				x			
गम	रेग	म॑ध	म॑	रेग	रे	सा	ऩि	रे	ग	प	-	प	म॑	प	म॑
नऽ	ऽऽ	मऽ	थु	रा	न	ऽ	जै	हो	मो	रा	ऽ	का	ऽ	ऽ	ऽ
2				o				3				x			
ग	-	म	-	(रे)ग	-	-	-	ध	म॑	ग	रे	ग	-	रे	-
न	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	म	ना	क	रे	गो	ऽ	पी	ऽ
2				o				3				x			
सा	-	म॑	ग	रे	सा	रे	ऩि	रे	ग	प	ध				
याँ	ऽ,	म	थु	रा	न	ऽ	जै	हो	मो	रा	ऽ				
2				o				3							

1. मेहता, रामणलाल/आगरा घराना/पृ. ८८

अंतरा

म॑	म॑	ग	म॑	ध	नि	सां	रें	सां	–	–	–	सां	नि	रें	–
हे	ऽ	ऽ	म	थु	रा	ऽ	ऽ	ते	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ
o				2				o				3			
सां	–	–	म॑	ध	नि	सां	रें	सां	–	–	नि	ध	प	प	म॑
री	ऽ	ऽ	गो	ऽ	कु	ल	ऽ	ते	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ
x				2				o				3			
प	–	–	म॑	ध	नि	सां	रें	सां	–	–	नि	ध	प	प	म॑
री	ऽ	ऽ	ब्री	ज	में	ऽ	म	ची	ऽ	ऽ	ऽ	है	ऽ	धू	म
x				2				o				3			
ग	–	–	म	ग	–	म॑	ग	रे	सा	रे	ऩि	रे	ग	म॑	ध
धा	ऽ	ऽ	ऽ	म	ऽ	म	थु	रा	न	ऽ	जै	हो	ऽ	मो	रा
x				2				o				3			

विश्लेषण :

यह आगरा घराने कि बंदिश है । इस मे क्रिष्ण भगवान के मथुरा प्रस्थान के कारण ब्रीज कि गोपीयों कि व्याकुलता का वर्णन किया गया है । इस बंदिश की स्वरलिपी के सुक्ष्म अध्ययन से पूर्वी रागांग कि व्यापकता और इसका दुसरे रागों से संबंध अधिक स्पष्ट रूप से दिखाई देता है । इस बंदिश से कई ऐसी स्वर संगतियाँ प्राप्त होती है जिसका प्रयोग सीधे तौर पर पूर्वी रागांग कि दृष्टि से अन्य रागो मे होता है ।

इस बंदिश से प्राप्त महत्त्वपूर्ण पूर्वी रागांग वाचक स्वर संगतियाँ इस प्रकार है :

१) रे ग म॑ ग रे सा रे ऩि (गौरी पूर्वी थाट)

२) रे ग प – (पुरिया धनाश्री)

३) ग म रे ग – (पूर्वी कि महत्त्वपूर्ण रागांग वाचक स्वर संगति)

४) ध म॑ ग रे (पूर्वी एवम पुरिया धनाश्री कि महत्त्वपूर्ण संगति)

५) ग – म रे ग (पूर्वी रागांग कि महत्त्वपूर्ण स्वरसंगति)

६) ग मं ध नि सां रें सां (पूर्वी और बसंत)

इस प्रकार इस बंदीश कि स्वरलिपी के अध्ययन से पूर्वी रागांग वाचक कई महत्त्वपूर्ण स्वरसंगतियाँ प्राप्त होती है ।

४.२ राग परज – श्री मल्लक्ष्यसंगीतम् मे प्राप्त विवरण :

परज

पूर्वामेलसुसंजातः परजो विबुधप्रियः ।

आरोहे चावरोहेऽपि संपूर्णः सर्वसंमतः ।।९३।।

उत्तरांगप्रधानत्वात्तारषड्जांशशोभितः ।

गानमभीप्सितं तस्य नक्तं यामेऽन्तिमे सदा ।।९४।।

ग्रंथेषु वर्णितश्चायं मायामालव गौडजः ।

व्यवहारो तु मद्वंद्वो गीयते नैव संशय : ।।९५।।

रात्रिगेये स्वरूपेऽस्मिंस्तीव्रमस्य प्रयोजनम् ।

सुप्रमाणयुतं भूयाभ्द्‌दूषणं न तु दूषणम् ।।९६।।

चपलप्रकृतिर्नित्यं क्षुद्रगीतसमाश्रयः ।

प्रायशो गीयते लक्ष्ये कलिंगमिश्रितो ध्रुवम् ।।९७।।

ग्रंथेषु दाक्षिणात्यानां परजः समुदीरितः ।

संपूर्णः सांशकश्चैव मायामालवगौडके ।।९८।।

गौरीमेलसमुत्पन्नो रागोऽयं समुदीरितः ।

हृत्प्रकाशाह्यय ग्रंथे वयं लक्ष्यानुवर्तिनः ।।९९।।[1]

संक्षिप्त अर्थ :

संगीतज्ञों का प्रिय राग परज पूर्वीमेल से उत्पन्न हुआ है तथा इसकी जाति

---

1. भातखंडे, विष्णु नारायण/श्रीमल्लक्ष्यसंगीतम्/पृ. १३०

संपूर्ण है । उत्तरांग प्रधान राग होने के कारण इस राग का वादि स्वर तार षड्ज है और गायन समय रात्री का अंतिम प्रहर है । ग्रंथो मे परज को मायामालवगौडमेल से उत्पन्न बताया गया है, परन्तू प्रचलित व्यहवहार मे यह निश्चित रूप से दोनो मध्यमो से युक्त गाया जाता है । इस रात्रीगेय राग मे तिव्र मध्यम का समुचित प्रमण मे प्रयोग रंजकता को कम करनेवाला न होकर रंजकता को बढाने वाला है । इस राग की प्रकृति चंचल है तथा इसमे क्षुद्र अर्थात हल्के फूल्के गीत गाए जाते है । वर्तमान संगीत पद्धति मे परज को प्रायः कालिंगडा मिश्रित गाया जाता है । दक्षिणात्य पद्धति के गंथो मे परज को मायामालवगौड मेल जन्य, पड्ज वादि संपूर्ण जाति का राग बताया गया है । हृदय प्रकाश नामक गंथ में इस राग को गौरी मेल से उत्पन्न माना गया है ।

४.२.१. राग परज के संबंध मे विद्वानो के मत

१. पंडित विष्णु नारायण भातखंडे जी का मत :

पंडित भातखंडेजी के अनुसार परज यह उत्तरांग प्रधान है और यह रात्री के अंतिम प्रहर मे गाया जाता है । इस राग का वादि स्वर तार सां है और इसमे दोनो मध्यम का प्रयोग किया जाता है । रात्री अभी बाकी है इसका सुचक तीव्र मध्यम और सुबह होने वाली है, इसका सूचक शुध्द मध्यम है। परज कि राग वाचक तान इस प्रकार है

नि सां रें नि सां, नि ध प, म॑ प, ध प , ग म ग

इस राग के अवरोह में मींड का प्रयोग नहि किया जाता है । बसंत और परज यह नजदिक के राग है, इसलिए परज कि पकड के रूप मे प ध नि, ध नि सां, नि ध प यह महत्त्वपूर्ण स्वर संगति है । परज कि प्रकृति गंभीर नही है, तार षड्ज पर ठहराव करते हुए नि ध प के उच्चारण से परज राग स्पष्ट होने लगता है । परज का आरोह ऩि सा ग ग, म॑ ध नि सां, सां रें नि सां इस प्रकार किया जा सकता है । इस मे आगे नि रें ग रें सां, सां रें नि सां नि, ध प से तार सप्तक का स्वरूप स्पष्ट किया गया है ।

एक मतानुसार परज गाते समय कालिंगडा का किंचित आभास दिखाई देता है और बसंत गाते समय श्रीराग का आभास होता है । सां नि ध प, ध नि ध प, ग म ग इसका प्रयोग कालिंगडा और परज दोनों मे होता है । इस स्वर संगति के साथ ग म प ध म प, ध प, ग म ग, म ग, रे सा को जोड ने से कालिंगडा राग स्पष्ट होता है और ध नि, ध नि सां, नि ध प, ध प, ग म ग, ग मं ध, ग मं ग रे सा को जोड ने से परज राग स्पष्ट होता है । इस राग मे पंचम का प्रयोग प ध नि, ध नि सां, नि ध प, प ध नि सां, सा रें सा रें नि सां, मं ध नि सां इस प्रकार किया जाता है । परज राग जीतना धीमी गति एवम् मींड के साथ अगर गाया जाएगा तो उतना ही वह बसंत के समीप जाने कि संभावना उतनी ही बढ जाती है । इस राग के अंतरे का उठाव इस राग मे निम्नरूप से किया जाता है :-

मं ध नि सां, सां, नि सां, रें रें सां, सां रें सां रें नि सां, नि ध नि, सा ग मं ध नि सां रें गं रें सां, ध नि, ध सां, नि ध प, ध प, ग म ग, मं ग रे सा [1]

२. पंडित गींडे जी का मत :

पंडित गींडेजीने राग परज का स्वरूप इस प्रकार बताया है :

नि सां, नि ध प मं ध नि, प ध मं ग म रेग, ध प ध मं प ग म ग रे ग, नि ध नि ध प ध मं प मं ग रेग, मं ग रे ग मं प प मं रेग रे सा (कालिंगडा का जोड), ध प ध मं प मं ग, ध नि सां नि ध प मं ध नि, ध नि (सां) नि ध प, ध प ध मं प मं ग, मं ग रे ग, मं प प, मं ग रे ग रे सा, ध नि रें गं रें सां, रें सां रें नि सां नि ध सां नि, ध रें सां प ध प ग म ग, नि़ सा रे ग मं ध नि रें गं रें सां, रें सां नि ध नि [2]

४.२.२. राग परज स्वर विस्तार एवं रागांग पूर्वी का विश्लेषण

१. स्वर विस्तार - पंडित भातखंडे, हिन्दुस्तानी संगीत पद्धति :

सा नि़ सा ग, म ग, मं ध नि सां, ध नि, ध नि सां नि ध प, प ध नि सां नि, ध प, ग म ग, सा रे सा नि़, सा ग म ग, नि ध प, मं प, ध प, ग म ग, रे सा ।

1. भातखंडे, विष्णु नारायण/हिंदुस्थानी संगीत पद्धती/पृ. १८५,१८६,१८७
2. गिंडे, के.जी./लेक्चर डेमॉन्सट्रेशन/पूर्वी अंग राग/ मीरा म्युजिक

सा सा, ग म प प, ध प, म॑ ध, म॑ ध नि नि सां, नि सां नि ध प, ध प, ग म ग, प ध म॑ ध, नि नि सां, रें रें सां रें नि नि सां, रें गं रें सा, नि सां, ध नि, ध सां नि ध प, म॑ ध सां नि ध प, ग म ग [1]

विश्लेषण :

उपरोक्त स्वर विस्तार से यह स्पष्ट है कि इस राग मे पूर्वी रागांग कि शुद्ध मध्यम युक्त स्वर संगति ग म ग का प्रयोग दिखाई देता है । इस स्वर विस्तार मे पूर्वी रागांग वाचक अन्य स्वर संगतियों का प्रयोग किया गया है जो इस प्रकार है :

१) म॑ ध नि सां   २) ध नि सां नि ध प

३) नि ध प   ४) ध प म॑ ध

५) रें गं रें सां   ६) म॑ ध सां

इस से यह स्पष्ट है कि परज का स्वर विस्तार पूर्वी रागांग से अधिक प्रभावित है। पूर्वी के स्वरो के लगाव भेद और चलन भेद के कारण परज का स्वरूप स्पष्ट होता है ।

४.२.३. राग परज कि बंदिशे एवं रागांग पूर्वी का विश्लेषण

१. मैं क्यों गई जमुना (क्रमिक पुस्तक मालिका)

ताल : त्रिताल

स्थायी : मैं क्यों गई जमुना पानी, देखत ही मन मोह लियो मेरो
सांवल हात बिकानी सखी

अंतरा : मेरे मन बसी सावरि सुरत, लोक कहे बोरानी
प्रगट भई बलिहारि शाम सों, लागी पीते न छानि सखी [2]

1. भातखंडे, विष्णु नारायण/हिंदुस्थानी संगीत पद्धथी/पृ. १९३
2. भातखंडे, विष्णु नारायण/क्रमिक पुस्तक मालिका/पृ. ४२३

रथायी

(सां)नि	सां	नि	ध	प	ध	म॑	ध	नि	-	सां	-	सां	-	धम॑	धऽ
क्यौं	ऽ	ग	इ	ज	मु	ना	ऽ	पा	ऽ	नी	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ
०				3				x				2			
(सां)नि	-	सां	रें	(नि)सां	नि	ध	प	(प)ग	-	म	ग	रे	-	सा	सा
दे	ऽ	ख	त	ही	ऽ	म	न	मो	ऽ	ह	लि	यो	ऽ	मे	रो
०				3				x				2			
(नि)सा	-	ग	ग	ग	-	(ध)म॑	ध	(सां)नि	-	सां	रें	सां	-	नि	ध
सां	ऽ	व	ल	हा	ऽ	त	बि	का	ऽ	नि	स	खी	ऽ,	मैं	ऽ
०				3				x				2			

अंतरा

(प)ध	-	म॑	ध	नि	नि	सां	-	(नि)सां	रें	सां	रें	(सां)नि	-	सां	सां
मे	ऽ	रे	म	न	ब	सी	ऽ	सा	ऽ	व	रि	सू	ऽ	र	त
०				3				x				2			
(प)ध	रें	सां	रें	(सां)नि	-	(ध)म॑	ध	(सां)नि	-	सां	-	-	-	-	-
लो	ऽ	क	क	हे	ऽ	बो	ऽ	रा	ऽ	नी	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ
०				3				x				2			
(सां)नि	नि	सां	रें	(नि)सां	नि	ध	प	(प)ग	-	मग	री	-	री	सा	-
प्र	ग	ट	भ	ई	ऽ	ब	लि	हा	ऽ	रिऽ	शा	ऽ	म	सों	ऽ
०				3				x				2			
(नि)सा	-	ग	-	ग	-	(ध)म॑	ध	नि	-	सां	रें	सां	-	नि	ध
ला	ऽ	गी	ऽ	पी	ऽ	ते	न	छा	ऽ	नि	स	खी	ऽ,	मैं	ऽ
०				3				x				2			

विश्लेषण :

पूर्वी के स्वरों मे लगाव भेद के कारण इस राग कि रचना हुई है । यह इस स्वरलिपी के अध्ययन से पता चलता है । पूर्वी मे शुद्ध मध्यम का प्रयोग रागांग वाचक माना गया है । उसी प्रकार शुद्ध मध्यम का प्रयोग परज मे किया गया है परंतु स्वर लगाव के

सुक्ष्म भेद को ध्यान मे रखना आवश्यक है ।

ध प – ग – म ग इस प्रकार पूर्वी रागांग का इस स्वर लिपी मे प्रयगो किया गया है । परंतु अंतिम गंधार पर ऋषभ का कण परज मे नही लगाया जाता है । पूर्वी मे इस स्वर संगति मे अंतिम गंधार पर ऋषभ का कण लगाया जाता है । यह इस स्वरलिपी से स्पष्ट होता है । तार षड्ज और शुद्ध निषाद का प्रभुत्व जो परज कि खासीयत है इस स्वरलिपी मे दिखाई देती है ।

२. मुरली बजाय मेरो मन (आगरा घराने कि बंदिश)

ताल : त्रिताल

स्थायी : मुरली बजाय मेरो मन मोह लेत ।

मन मोहन ब्रीज को रसीया, जात हती मैं तो ब्रीज की गलियां ।

अंतरा : देखी सरस सांवरी सूरत ललच रह्यो है,

मेरो जिया, सुन धुन दिल बीच लाग रही बेकलिया ।। 1

स्थायी

												–	–	ध	नि
												ऽ	ऽ,	मु	र
o				3				x				2			
सां	रें	नि	सां	नि	ध	प	ध	म	–	ध	नि	सां	सां	ध	सां
ली	ब	जा	य	मे	रो	म	न	मो	ऽ	ह	ले	ऽ	त	म	न
o				3				x				2			
नि	ध	प	ध	प	म	प	–	ग	म	ग	–	–	–	रे	सा
मो	ऽ	ह	न	ब्री	ज	को	ऽ	र	सी	या	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ
o				3				x				2			
–	सा	नि़	रे	ग	–	म	ध	नि	ध	नि	सां	नि	सां,	म	प
ऽ	जा	त	ह	ती	ऽ	मैं	तो	ब्री	ज	की	ग	लि	यां,	मु	र
o				3				x				2			

1. मेहता, रमणलाल/आगरा घराना/पृ.९१

अंतरा

–	ध	म	ध	नि	सां	सां	रें	सां	रें	नि	सां	रें	नि	सां	रें
ऽ	दे	खी	स	र	स	सां	व	री	सु	र	त	ल	ल	च	र
3				x				2				o			
सां	–	ध	पध	प	–	ग	म	ग	–	रे	सा	नि़	सा	ग	ग
ह्यो	ऽ	है	ऽऽ	मे	ऽ	रो	जी	या	ऽ	सु	न	धु	न	दि	ल
3				x				2				o			
म	ध	म	ध	नि	सां	सां	रें	नि	सां	ध	नि				
बी	च	ला	ग	र	ही	बे	क	लि	यां,	मु	र				
3				x				2				2			

विश्लेषण :

यह आगरा घराने कि बंदिश है जिसके रचनाकार "सरसपिया" स्व. उ. काले खाँजी है । इस बंदिश कि स्वरलिपी से परज राग का स्वरूप तथा साथ हि पूर्वी रागांग वाचक स्वर संगतियों का प्रयोग भी दिखाई देता है । म – ध नि, म प – ग म ग नि रे ग, म ध नि यह स्वर संगतियाँ पूर्वी रागांग को स्पष्ट करती है । इसके अलावा राग परज का स्वरूप स्पष्ट करती हुई ध नि सां रें नि सां, सां ध सां नि ध प ध, सां रें सां रें नि सां का भी प्रयोग दिखाई देता है ।

इस बंदिश कि रचना लयकारीयुक्त है और राग कि प्रकृति के अनुकूल है । क्रिष्ण और गोपीयाों के बीच कि प्रेम लीला का अद्‌भूत वर्णन इस बंदिश मे किया गया है।

४.३ राग पूरिया धनाश्री – श्री मल्लक्ष्यसंगीतम् मे प्राप्त विवरण :

पूरिया धनाश्री

कामवर्धनिकामेलाज्जाता पूर्याधनाश्रिका ।
आरोहे चावरोहेऽपि संपूर्णा बुधसंमता ।।७९।।
पंचमोऽत्र भवेद्वादी संवादी षड्ज ईरतिः ।
गानमस्याः समीचीनं दिनान्तेऽतिमनोहरम् ।। ८०।।
स्वीकुर्वन्ति पुनः केचिदेनां धनाश्रिकां स्वयम् ।
काफीमेलोद्भवा तेषां मते भीमपलाशिका ।।८१।।
शुद्धमध्यमहीनत्वाद्वादित्वात्पंचमस्य च ।
रागिणीयं भवेभ्दिन्ना पूर्व्या इति परिस्फुटम् ।।८२।।
श्रीरागस्य प्रसिद्धांगं न चैवात्रोपलभ्यते ।
अतस्तदंगभूतास्ते विविक्ताः सुखमंजसा ।।८३।।
उत्तरांगप्रधानेषु वसंतपरजादिषु ।
मध्यमद्वयसंयोगाद्यर्थं तत्रापि शंकनम् ।।८४।।
स्वरैर्निसरिगमगैर्यथा पूर्वी भवेत् स्फुटा ।
इयं परिस्फुटा लक्ष्ये स्यान्मरिगरिसस्वरैः ।।८५।। [1]

संक्षिप्त अर्थ :

पूरिया धनाश्री राग को कामवर्धिनीमेल (पूर्वी मेल) से उत्पन्न माना है, जिसकी जाति संपूर्ण संपूर्ण है । इस राग का वादि स्वर पंचम् तथा संवादि स्वर षड्ज है । दिन के अंतिम प्रहर मे इस राग का गायन रंजक प्रतित होता है । कुछ लोग इस राग को ही धनाश्री के रूप मे स्वीकार करते है । उनके मतानुसार भिमपलासी काफीमेल जन्य है । इस राग में शुद्ध मध्यम का प्रयोग न होने के कारण तथा पंचम के वादित्व के कारण पूरिया धनाश्री राग पूर्वी से भिन्न हो जाता है । इस राग मे श्री रागांग का प्रयोग नही किया जाता है । इसलिए श्री अंग से युक्त रागो से पूरिया धनाश्री का स्वरूप भिन्न है । पूरिया धनाश्री मे

1. भातखंडे, विष्णु नारायण/श्रीमल्लक्ष्यसंगीतम्/पृ. १२९

वसंत, परज आदि रागो के आभास की शंका व्यर्थ है, क्योंकि ये राग उत्तरांग प्रधान है, और उनमें दोनो मध्यमों का प्रयोग होता है । जिस प्रकार पूर्वी राग "नि़, सा, रे म ग" से स्पष्ट होता है, उसी प्रकार पूरिया धनाश्री राग "मं रे ग रे सा" इस स्वर समूह से स्पष्ट हो जाता है ।

४.३.१. राग पूरिया धनाश्री के संबंध मे विद्वानो के मत

१. पंडित विष्णु नारायण भातखंडे जी का मत :

पंडित भातखंडेजी के अनुसार राग पूरिया धनाश्री पूर्वी अंग का राग है । इस राग का वादि स्वर पंचम है । इस राग कि महत्त्वपूर्ण स्वर संगति प, प ध प, मं रे ग, मं ध मं ग, रे, सा है । इस राग का प्रारंभ निम्न रूप से किया जाता है :

- सा, प, प, मं प ध प, मं ग, मं रे ग, मं ध प, सां, रें नि ध प, मं ग, ध मं ग, रे, सा

इस राग मे मं रे ग, रें नि ध प, ध मं ग, रे, सा इन स्वर संगतियों का प्रयोग किया जाता है । ओर इन स्वर संगतियों का सही उच्चारण आवश्यक है । अंतरे का उठाव ग, मं ध प, सां, सां, नि रें सां अथवा ग, मं ध मं , सां इस प्रकार किया जाता है । कभी कभी इस राग का उठाव पंचम से भी किया जाता है जैसे प, मं ग मं रे ग प और प, प मं प, ध प, मं ग, मं रे ग, प, मं , ग, रे सा । एक मतानुसार मं रे ग यह पूरिया राग कि स्वर संगति का मिश्रण पूर्वी राग मे करने से पूरिया धनाश्री राग की रचना हुई है । [1]

२. पंडित गींडेजी का मत :

पंडित गींडे जी राग पूरिया धनाश्री कि मुख्य राग वाचक संगतियाँ इस प्रकार बताते है :

- प ध ग मं रे ग प, मं रे ग प, प ध मं प मं रे प म रे ग प, प मं ध नि रें नि ध नि ध प, प ग मं ध नि रें नि ध प, प ध ग मं ध रें नि नि ध प, मं रे ग, रे ग मं रे ग प, मं ग, मं रे ग, ध मं ग रे ग रे सा ।

---

1. भातखंडे, विष्णु नारायण/हिंदुस्थानी संगीत पद्धती/पृ. १४४,१४५,१४६

– मं ग मं रे॒ ग, रे॒ ग प, मं ध॒ नि, नि ध॒ प, प मं ग रे॒ ग

इस राग मे पंचम पर न्यास महत्त्वपूर्ण है । इस राग मे ग प व नि स्वर प्रबल है जो पूर्वी अंग के रागो की विशेषता है । [1]

४.३.२. राग पूरिया धनाश्री का स्वर विस्तार एवं रागांग पूर्वी का विश्लेषण

१. स्वर विस्तार (पंडित भातखंडे, क्रमिक पुस्तक मालिका)

१) ग, रे॒ सा, ऩि रे॒ सा, ग, रे॒ ग, प, मं ध॒, प, मं ग, ध॒ मं रे॒ ग, मं ध॒ मं ग, ग, रे॒ सा

२) ऩि रे॒ सा, ग, रे॒ सा, ऩि सा, ग मं प, मं प, मं ध॒ प, नि ध॒, प, ध॒ मं ग, मं रे॒ ग, मं ध॒ मं ग, रे॒ ग, रे॒ सा

३) ऩि सा, ग मं प, मं प, ध॒ प, नि ध॒, प, रें॒ नि ध॒, प, मं प, मं ग, मं रे॒ ग, मं ध॒ मं ग, ग, रे॒ सा

४) ग, मं ध॒ प, सां, सां, नि रें॒, सां, नि रें॒ गं रें॒ सां, रें॒ नि ध॒ नि, रें॒ नि ध॒ प, मं प ध॒, मं प, मं ग, मं रे॒ ग, प, मं ध॒ नि रें॒ नि ध॒ प, ध॒ मं ग, मं रे॒ ग, रे॒ सा, ऩि रे॒ सा

५) ऩि सा, प, प, ध॒, प, मं रे॒ ग प, ऩि रे॒ ग मं ध॒ प, नि ध॒ प, रें॒ नि ध॒ प, मं रें॒ गं रें॒ सां, रें॒ नि ध॒ प, मं प, मं ध॒, मं प, ग मं प, रे॒ ग प, ऩि रें॒ ग, प मं ग, मं रे॒ ग, रे॒ सा, प, ध॒ प [2]

विश्लेषण :

पूरिया धनाश्री यह पूर्वी थाट का प्रसिद्ध राग है । इस मे पूर्वी रागांग वाचक स्वर संगतियों का काफी प्रयोग किया जाता है । उपरोक्त स्वर विस्तार मे निम्न पूर्वी रागांग वाचक स्वर संगतियों का प्रयोग किया गया है ।

१) ऩि रे॒ सा   २) मं ध॒, प   ३) ग मं प, मं प, मं ध॒ प

४) नि ध॒, प   ५) मं ध॒ मं ग   ६) रें॒ नि ध॒, प

७) नि रें॒ गं रें॒ सां   ८) ऩि रे॒ ग मं ध॒ प

इस प्रकार पूर्वी कि रागांग वाचक स्वर संगतियों का विपूल मात्रा मे प्रयोग स्पष्ट

1. गिंडे, के.जी./लेक्चर डेमॉन्सट्रेशन/पूर्वी अंग राग/मीरा म्युजिक
2. भातखंडे, विष्णु नारायण/क्रमिक पुस्तक मालिका/पृ. ८११

रूप से दिखाई देता है । इस के अलावा पूरिया धनाश्री कि कुछ विशिष्ट स्वर संगतियों का प्रयोग भी दिखाई देता है । जो इस प्रकार है :

१) म॑ रे॒ ग प २) म॑ रे॒ ग

इस के साथ ही म॑ ध॒ म॑ ग और ध॒ म॑ ग का भी अधिक प्रयोग दिखाई देता है ।

४.३.३. राग पूरिया धनाश्री कि बंदिशे एवं रागांग पूर्वी का विश्लेषण

१. तेरो ही आस करूँ (पंडित रामाश्रय झा)

ताल : त्रिताल

स्थायी : तेरो ही आस करूँ करतार, अलख निरंजन निराकार ।

अंतरा : निरगुन है तू ही साकार, तू ही रामरंग आधार ।। [1]

स्थायी

															नि़
															ते
3				x				2				o			
रे॒	ग	-	म॑	रे॒	ग	प	प	ध॒	म॑	प	(म॑)ग	म॑	(ग)रे॒	ग,	ग
ऽ	रो	ऽ	ही	आ	ऽ	स	क	रूँ	ऽ	क	र	ता	ऽ	र,	अ
3				x				2				o			
म॑	ध॒	नि	रें॒	नि	ध॒	प	म॑	ग	(ध॒)म॑	ध॒	म॑	ग	रे॒	सा,	नि़
ल	ख	ऽ	नि	रं	ऽ	ज	न	नि	रा	ऽ	का	ऽ	ऽ	र,	ते
3				x				2				o			

1. बनर्जी, गीता/राग शास्त्र/पृ. १४४

अंतरा

															प
															नि
3				x				2				o			
प	ग	-	म॑	ध	-	सां	-	नि	(नि)ध	नि	रें	नि	ध	प,	गम॑
र	गु	ऽ	न	है	ऽ	तू	ऽ	हो	ऽ	सा	ऽ	का	ऽ	र,	तूऽ
3				x				2				o			
ध	म॑	ग	रे	नि़	रे	ग	म॑	गम॑	(ध)धनि	सांनि	धप	म॑ग	रेसा	नि़सा़	नि़
ऽ	ही	ऽ	रा	ऽ	म	रं	ग	आऽ	ऽऽ	ऽऽ	धाऽ	ऽऽ	ऽऽ	रऽ	ते
3				x				2				o			

विश्लेषण :

इस बंदिश के रचनाकार पंडित रामाश्रय झा – रामरंग है । इस बंदिश मे पूर्वी रागांग वाचक स्वर संगतियाँ जैसे कि

१) म॑ ध नि रें नि ध प २) ग म॑ ध म॑ ग रे सा

३) म॑ ध – सां ४) नि ध नि रें नि ध प

५) नि रे ग म॑

का प्रयोग दिखाई देता है ।

इसी के साथ पूरिया धनाश्री कि विशिष्ट राग वाचक स्वर संगतियाँ जैसे कि

१) नि रे ग – म॑ रे ग प २) ग म रे ग

३) गम॑ ध म॑ ग रे

का प्रयोग किया गया है । इस बंदिश के शब्द भक्ति र स के पोषक है और इस मे इश्वर के निर्गुण निराकार स्वरूप का वर्णन किया गया है । पूर्वी के चलन मे कुछ विशिष्ट स्वर संगतियों के प्रयोग से पूरिया धनाश्री का स्वरूप स्पष्ट होता है यह इस स्वरलिपी के अध्ययन से दिखाई देता है ।

२. पायलिया झनकार (क्रमिक पुस्तक मालिका)

ताल : त्रिताल

स्थायी : पायलिया झनकार मोरि, झनन झनन बाजे झनकारी

अंतरा : पिया समझाऊं समझत नाहीं, सास ननंद मोरी देगि गारी [1]

स्थायी

म				ध		ध							म		
प	-	ध	ग	म	ध	रें	नि	ध	-	प	प	-	प	-	प
पा	ऽ	य	लि	या	ऽ	झ	न	का	ऽ	ऽ	र	ऽ	मो	ऽ	रि
o				3				x				2			
ध	ध							ग							
म	मध	म	ग	म	री	ग	-	म	रे	ग	म	ग	रे	सा	-
झ	नऽ	न	झ	न	न	बा	ऽ	जे	ऽ	झ	न	का	ऽ	री	ऽ
o				3				x				2			

अंतरा

ग				ध				ध							
म	म	ग	ग	म	-	ध	-	सां	सां	सां	सां	रें	-	सां	-
पि	या	स	म	झा	ऽ	ऊं	ऽ	स	म	झ	त	ना	ऽ	हीं	ऽ
o				3				x				2			
सां				रें						सां			ध		
नि	रें	गं	रें	नि	रें	सां	-	नि	ध	नि	रें	नि	नि	ध	प
सा	ऽ	स	न	नं	द	मो	ऽ	री	ऽ	दे	ऽ	गि	गा	ऽ	रि
o				3				x				2			

विश्लेषण

यह पूरिया धनाश्री कि एक प्रसिद्ध छोटा ख्याल कि बंदिश है । इसकि स्वरलिपी के अध्ययन से हमें पूर्वी की रागांग वाचक स्वर संगतियाँ और पूरिया धनाश्री कि महत्त्वपूर्ण स्वर संगतियों का संयोग दिखाई देता है । इस स्वरलिपी मे पूर्वी राग से संबंधित स्वर संगतियाँ जो पूरिया धनाश्री मे भी प्रयोग कि जाती है वह निम्नरूप से है :

१) म ध रें नि ध - प प　　　　२) मध म ग

1. भातखंडे, विष्णु नारायण/क्रमिक पुस्तक मालिका/पृ. ३४७

३) मं ग रे सा　　　　　४) मं – ध – सां

५) सां रें सां　　　　　६) नि रें गं रें नि रें सां

७) ध नि रें नि ध प

इस के अलावा पूरिया धनाश्री सुचक विशिष्ट स्वर संगतियाँ जैसे कि

१) प – ध ग　　　　　२) मं रें ग

का प्रयोग भी दिखाई देता है । इससे पूरिया धनाश्री कि रचना पूर्वी से काफी अधिक मात्रा मे प्रभावित है यह दिखाई देता है । इस बंदिश मे श्रृंगार एवम् नायीका कि व्याकुलता के भावों के दर्शन होते है ।

४.४ राग श्री – श्री मल्लक्ष्यसंगीतम् मे प्राप्त विवरण :

श्रीरागः

पूर्वीमेलसमुत्पन्नः श्रीरागो लक्ष्यविश्रुतः ।
हरप्रियाह्वये मेले वर्णिततोऽसौ पुरातनैः ।।१४।।
आरोहे गधवर्ज्यं स्यादवरोहे समग्रकम् ।
गानमस्य समादिष्टं दिनान्तेऽतिमनोहरम् ।।१५।।
ऋषभः संमतो वादी संवादी पंचमो भवेत् ।
केचिद्विपर्ययं प्राहुर्वयं लक्ष्यानुवर्तिनः ।।१६।।
गंभीरप्रकृतिर्नित्यं विलंबितलयान्वितः ।
अवश्यं स्याद्दिनान्तेऽसौ भुक्तिमुक्तिप्रदो नृणाम् ।।१७।।
श्रीरांगांगं स्वतंत्रं यन्मन्यते लक्ष्यवेदिभिः ।
सावानं यथान्यायमभ्यस्यंण प्रथमं बुधै ।।१८।।
रिपयोः संगतिश्चात्र भवेद्रागांगवाचिका ।
सरिरिसस्वरैः स्पष्टं रागरूपं प्रदर्शयेत् ।।१९।।

पद्धत्यां दाक्षिणात्याना श्रीरागो गीयतेऽधुना ।

खरहरप्रियामेलस्वरैरिति परिस्फुटम् ।।२०।। [1]

संक्षिप्त अर्थ :

पुर्वी मेल से उत्पन्न श्री राग सुप्रसिद्ध राग है । प्राचीन ग्रंथकारो ने इस राग को काफी मेल के अंतर्गत वर्णित किया है । इस राग के आरोह मे गंधार और धैवत वर्जित है, तथा अवरोह संपूर्ण है । इस राग का गायन समय दिन का अंतिम प्रहर है । इस राग का वादि स्वर पंचम तथा संवादि स्वर ऋषभ माना गया है । कुछ विद्वान इस राग मे ऋषभ को वादि और पंचम को संवादि मानते है । दिन के अंतिम प्रहर मे गाया जानेवाला यह राग विलंबित लय के लिए उचित, गंभीर प्रकृति का एवं लौकिक तथा आध्यात्मिक आनंद प्रदान करने वाला माना गया है । श्रीराग का विशिष्ट एवं स्वतंत्र अंग विद्वानो ने मान्य किया है । इस राग मे ऋषभ और पंचम की संगति महत्त्वपूर्ण एवं राग वाचक है ।

"सा <u>रे</u> ^ग <u>रे</u> सा" इन स्वरो से राग स्पष्ट होता है । वर्तमान दक्षिणात्य पद्धति मे श्रीराग को खरहरप्रिया मेल के स्वरो से गाया जाता है ।

४.४.१. राग श्री के संबंध मे पंडित विष्णु नारायण भातखंडे जी का मत

"श्री" राग एक प्राचीन व प्रसिद्ध राग माना गया है । कई ग्रंथकार श्री राग मे साधारण गंधार व कौशिक निषाद मानते है । हिन्दुस्तानी पद्धति के अंतर्गत कोमल गंधार व कोमल निषाद स्वर इनके समकक्ष माने गये है जो काफी थाट के स्वर है । दक्षिण के ग्रंथकार श्री का थाट काफी मानते है । पंडित भातखंडेजी के अनुसार कुछ ग्रंथकारोने मालवी, त्रिवेणी, गौरी व टंकी को श्री राग कि भार्या माना है । मालवी त्रिवेणी जैसे रागों मे थोडा सा श्री अंग दिखाया जाता है । श्री राग की प्रकृती हंमेशा गंभीर रखने का प्रयत्न करना चाहिए । इस राग के आरोह मे गंधार व धैवत वर्जित होते है । इस राग मे ऋषभ और पंचम इन दो स्वरों पर राग कि सारी खुबी आधारीत है । इस राग मे षड्ज, ऋषभ और

1. भातखंडे, विष्णु नारायण/श्रीमल्लक्ष्यसंगीतम्/पृ. १२३

पंचम इन स्वरों पर न्यास किया जाता है । इस राग मे रे रे सा और ध ध प यह स्वर समुदाय अत्यंत महत्त्वपूर्ण है इसमे पहले ऋषभ पर षड्ज का कण लगाया जाता है और दुसरे पर गंधार का । उसी प्रकार पहले धैवत पर पंचम का कण लिया जाता है और दुसरे पर निषाद का कण लिया जाता है । पंडित भातखंडेजी के अनुसार जीस विद्यार्थी को यह समुदाय ठीक से गाना बजाना आ गया उसे श्री राग समझने मे सरलता का अनुभव होगा । रे रे, सा ध ध प इस स्वर संगति से भैरव राग उत्पन्न होता है। सा, रे रे, सा ध़ प यह भैरव है सा रे रे सा, ध़ ध़ प़ यह श्री राग है । आगे षड्ज पर पहोचने के लिए स्वतंत्र स्वर संगतियाँ दोनो रागो मे है म प ध़, नि़ सा यह भैरव मे प्रयोग होगा और म़ॅ प नि़, सा, रे सां ऐसा श्री मे प्रयोग किया जाएगा । इस राग मे मध्यम और निषाद पर न्यास नहि किया जाता है । इस राग मे गंधार अवरोह मे स्पष्ट किया जाता है । गंधार को कभी कभी ऋषभ का कण लगाया जाता है और कभी कभी तीव्र मध्यम का कण लगाया जाता है । श्री राग का प्रारंभ इस प्रकार किया जता है :

- सा, रे रे सा, नि़, सा रे रे सा, ग रे रे सा नि़, रे नि़ ध़ प़, म़ॅ प़ नि़, सा, रे सा, मॅ ग रे , ग रे, रे सा, नि़ रे सा
- रे प मॅ प, ध प,नि ध प, मॅ प ध मॅ ग रे, प मॅ ग रे, मॅ ग रे, ग रे, सा, नि़ रे सा
- ध़ ध़ प़, म़ॅ प़, नि़ ध़ प़, म़ॅ प़, नि़ सा, रे रे, मॅ ग रे, ग रे सा, सा रे सा

इस राग मे रे प कि संगति का बीच बीच मे प्रयोग किया जाता है ।

उदा. रे रे प, प, मॅ ध प मॅ ग रे, प मॅ ग रे, ग रे सा, सा रे सा

इस राग मे अंतरे कि उठान इस प्रकार है :

प प, मॅ ध प, नि, सां, नि, रें गं रें सां, नि नि, सां, रें नि ध प [1]

४.४.२. राग श्री का स्वर विस्तार एवं रागांग पूर्वी का विश्लेषण

१. स्वर विस्तार (पंडित भातखंडे, हिन्दुस्तानी संगीत पद्धति)

१) रे रे सा, नि़ सा, रे रे सा, नि़ रे ग रे सा, ग रे ग रे सा, नि़ सा, मॅ ग रे,

1. भातखंडे, विष्णु नारायण/हिंदुस्थानी संगीत पद्धती/पृ. ४४,४७

ग रे सा, नि़ रे सा

२) सा, नि़ नि़, रे नि़ ध़ प़, म॑ प़, ध़ प़, नि़ ध़ प़, नि़ नि़, रे सा, ग रे, म॑ ग रे, ध म॑ ग रे, ग रे सा, नि़ रे सा, नि़ सा, रे रे सा, ग रे सा, नि़ सा ग रे सा, ग रे म॑ ग रे सा, नि़ रे सा, ग रे म॑ , ग रे, ध म॑ ग रे, ग रे, सा, नि़ रे सा, नि़ रे सा, प, प, म॑ ध प, म॑ ग रे, नि ध, प, म॑ ग रे, रे प म॑ ग रे, ग रे सा, नि़ रे सा, प, प ध प, सां, सां रें सां, नि रें गं रें सां, रें नि ध, प, म॑ ध प, नि रें नि ध प, म॑ म॑ ध म ग रे, नि ध प म॑ ग रे, म॑ ग रे, ग रे सा, नि़ रे सा [1]

विश्लेषण :

इस स्वर विस्तार मे श्री अंग कि विशिष्ट स्वर संगतियों के साथ पूर्वी रागांग सुचक स्वर संगतियों का प्रयोग किया गया है । पूर्वी रागांग नि रे सा, रे नि़ ध़ प़, ध म॑ ग रे, प म॑ ध प, नि ध प, नि रें नि ध प इन स्वर संगतियों से स्पष्ट होता है । रे प इस श्रीअंग कि संगति का प्रयोग भी इस स्वर विस्तार मे किया गया है । पूर्वी के शुद्ध मध्यम का प्रयोग न करते हुए पूर्वी के स्वरूप मे लगाव भेद और चलन भेद के कारण इस राग के स्वरूप का निर्मिती मानी जा सकती है जीसे इस स्वर विस्तार मे स्पष्ट किया गया है ।

४.४.३. राग श्री कि बंदिशे एवं रागांग पूर्वी का विश्लेषण

१. प्रभू के चरण (क्रमिक पुस्तक मालिका)

ताल : झपताल

स्थायी : प्रभू के चरण कमल निसदिन सुमिर रे
भाव धर सुध भीतर, भव जलधि तर रे

अंतरा : जोई जोई धरत ध्यान पावत समाधान,
हर रंग कहे ग्यान, अब हु चित धर रे [2]

1. भातखंडे, विष्णु नारायण/हिंदुस्थानी संगीत पद्धती/पृ. ६१
2. भातखंडे, विष्णु नारायण/क्रमिक पुस्तक मालिका/पृ. ३७५

स्थायी

सानि़	नि़रे	रे	ग	रे	रे	सा	रे	सा	सा
प्र	भूऽ	के	ऽ	च	र	न	क	म	ल
x		2			o		3		
(सा)नि़	सा	रे	सा	सा	(नि़)ध़	प़	सा	–	–
नि	स	दि	न	सु	मि	र	रे	ऽ	ऽ
x		2			o		3		
(सा)नि़	सा	(सा)प	प	प	(ध)म॑	प	ध	प	प
भा	ऽ	व	ध	र	सु	ध	भी	त	र
x		2			o		3		
(प)म॑प	पध	(ध)म॑	म॑	गरे	ग	रे	सा	–	–
भऽ	वऽ	ज	ल	धिऽ	त	र	रे	ऽ	ऽ
x		2			o		3		

अंतरा

(प)म॑	प	(सां)नि	नि	सां	सां	सां	सां	–	सां
जो	इ	जो	इ	ध	र	त	ध्या	ऽ	न
x		2			o		3		
(सां)नि	सां	रें	रें	सां	नि	सां	नि	ध	प
पा	ऽ	व	त	स	मा	ऽ	धा	ऽ	न
x		2			o		3		
(प)म॑	प	(सां)नि	सां	रें	रें	–	सां	–	सां
ह	र	रं	ग	क	हे	ऽ	ग्या	ऽ	न
x		2			o		3		
(सां)नि	सां	नि	ध	प	(ध)म॑	गरे	ग	रे	सा
अ	ब	हु	चि	त	ध	रऽ	रे	ऽ	ऽ
x		2			o		3		

विश्लेषण :

यह बंदिश श्री राग कि प्रसिद्ध बंदिश है । इस बंदिश कि स्थाई मे हमें पूर्वी रागांग कि ध म प ध प और ध म ग रे का प्रयोग दिखाई देता है । अंतरे मे नि सां नि ध प और मे गरे ग रे सा से पूर्वी रागांग स्पष्ट किया गया है । श्री रागांग कि प्रमुख स्वर संगतियां जैसे रे रे ग रे, सा प प प म प का प्रयोग स्थायी मे किया गया है । अंतरा मे म प नि़ सा, नि सां रें का प्रयोग श्री रागांग सुचक है । इस बंदिश के शब्द राग कि प्रकृति के लिए पोषक है। इस बंदिश के स्वर शब्द संयोग से गंभीर एवम् शांत वातावरण कि निर्मिती हो सकती है । भक्ति एवम् आध्यात्मीक भावों को प्रगट करनेवाली यह एक लोकप्रिय बंदिश है ।

२. करम की डारो नजर (पंडित दिनकर कायकिणी)

ताल : त्रिताल

स्थायी : करम की डारो नज़र मोरे पीर

जाऊँ बलिहारी तिहारे चरनन ।

अंतरा : "दिनरंग" माँगत दान सुरन को

वाकी करो इच्छा पूरन ।। [1]

स्थायी

															[ग]रे
															क
o				3				x				2			
ग	[ग]रे	-	सा	[सा]प	-	प,	[म]प	प	पम	[म]प	ध	[रे]ध	म	गरे	[ग]रे
र	म	ऽ	की	डा	ऽ	रो,	न	ज़	रऽ	मो	रे	पी	ऽ	रऽ,	जा
o				3				x				2			
ग	रे	[नि़]सा	सा	[सा]सां	-	सां	[प]रें	[नि]रें	नि	ध,	[म]ध	मध	ग	रे	
ऽ	ऊँ	ब	लि	हा	ऽ	री,	ति	हा	ऽ	रे,	च	रऽ	न	न	
o				3				x				2			

1. कायकिणी, दिनकर/राग रंग/पृ. ११४

अंतरा

(प)म	प	(सां)नि	नि	(नि)सां	-	सां	सां	(सां)रें	-	रें	रें	(रें)गं	(गं)रें	सां	(म)प
दि	न	रं	ग	माँ	ऽ	ग	त	दा	ऽ	न	सु	र	न	को,	वा
o				3				x				2			
(सां)नि	सां	रें	रें	(प)रें	नि	ध,	(म)प	म	(म)प	ध,	(प)ध	मध	म	ग;	(ग)रे
ऽ	की	ऽ	क	रो	ऽ	ऽ,	इ	च्छा	ऽ	ऽ	पू	ऽऽ	र	न,	क
o				3				x				2			

विश्लेषण

इस बंदिश के रचयिता "दिनरंग", स्व. पंडित दिनकर कायकिणीजी है । इस बंदिश के द्वारा ईश्वर के प्रति संपूर्ण समर्पण और उससे केवल सुरों का दान माँगते हुए भक्ति युक्त भावो का सृजन हुआ है । बंदिश के शब्द और स्वर रचना राग कि प्रकृति को और अधिक स्पष्ट करने मे सक्षम है । सुक्ष्मरूप से स्वरलिपी का अध्ययन करने पर रागांग पूर्वी कि प म प ध, ध म ग रे, रें नि ध प इन स्वर संगतियों का प्रयोग दिखाई देता है । इसके अलावा श्री अंग कि रे ग रे सा प, म प नि सां रें का प्रयोग दिखाई देता है । श्री रागांग स्पष्ट करने के लिए उचित कण स्वरों का प्रयोग इस स्वरलिपी मे किया गया है जो राग के सुक्ष्म अध्ययन के लिए अत्यंत आवश्यक है ।

२. गजरवा बाजे (क्रमिक पुस्तक मालिका)

ताल : विलंबीत त्रिताल

स्थायी : गजरवा बाजे रहीला बाजे बाजे हो

अंतरा : घडी पल छिन माई या बीतत है,

अष्ट जाम काम कीये का भयो मा [1]

1. भातखंडे, विष्णु नारायण/क्रमिक पुस्तक मालिका/पृ. ३६६

स्थायी

															,रे
															,ग
3				x				2				o			
(ग)रे	रे	सा	ऩिसा	(सा)प	-	-	म॑प	(ध)म॑	प	म॑प	(प)म॑पध	(ध)म॑	ग	रे	(सा)-रे
ज	र	वा	ऽऽ	बा	ऽ	ऽ	ऽऽ	ऽ	ऽ	ऽऽ	ऽऽऽ	जे	ऽ	ऽ	ऽ
3				x				2				o			
(रे)ग	रे	सा	ऩिसा	(सा)रेऩि	ध़	प़	-	(ऩि)सा	सानि	रे	-,सारेग	(रे)ग	रे	सा	,रे
ही	ऽ	ला	ऽऽ	वाऽ	ऽ	जे	ऽ	बा	ऽऽ	ऽ	ऽ,ऽऽऽ	जे	ऽ	ही	,ग
3				x				2				o			
(ग)रे	रे	सा	ऩिसा	(ऩि)सा	प	-	म॑प								
ज	र	वा	ऽऽ	बा	ऽ	ऽ	ऽऽ								
3				x				2				o			

अंतरा

(प)ध	प	-	(सां)निनि	सां	सां	रें	सां	(सां)नि	रेंगं	रें	सां	(सां)नि	निरें	निध	प
घ	डी	ऽ	पल	छि	न	मा	ई	या	ऽऽ	बी	ऽ	त	तऽ	हैऽ	ऽ
3				x				2				o			
(प)म॑	प	(सां)नि	सां	(गं)रें	-सां	(रें)निसां	सां	(ध)म॑प	रें	-	,रें	(रे)ग	रे	सा	,रे
अ	ष्ट	जा	म	का	ऽम	कीऽ	ये	काऽ	ऽ	ऽ	ऽभ	यो	ऽ	मा	ग
3				x				2				o			

विश्लेषण

इस बंदिश से पूर्वी रागांग वाचक निम्न स्वर संगतियों कि प्राप्ती होती है :

१) प म॑प म॑पध म॑ ग रे　　　　२) रे ऩि ध़ प़

३) नि रेंगं रें सां　　　　४) नि निरें निध प

उसी प्रकार श्री अंग कि विशिष्ट स्वर संगतियाँ भी इस बंदिश द्वारा प्राप्त होती है ।

जो इस प्रकार है :

१) सा<u>रे</u> ग<u>रे</u> <u>रे</u> सा २) ऩि सा साप

३) प।म प सांनि सां गं<u>रें</u>

इस प्रकार पूर्वी और श्री रागांग वाचक स्वर संगतियों के प्रयोग से श्री राग का परिपूर्ण स्वरूप हमे इस बंदिश द्वारा प्राप्त होता है ।

४.५ राग बसंत – श्री मल्लक्ष्यसंगीतम् मे प्राप्त विवरण :

वसंत

पूर्वीमेलसुसंजातो वसंताख्यो बुधैर्मतः ।
संपूर्णस्तारषड्जांशो वसंततौ सुखप्रदः ।।१००।।
मगयोः पुनरावृत्या विशिष्टं रक्तिमावहेत् ।
परजस्य विभिन्नत्वं तत्रैव प्रकटीभवेत् ।।१०१।।
रागेऽस्मिन्गायकैः प्रायो ललितांगं प्रदर्श्यते ।
यतः स्यात्सुलभं तेन रागास्यास्य प्रभेदनम् ।।१०२।।
ग्रंथेषु वर्णितो द्दष्टो मेले मालवगौडके ।
रात्रिगेयो यतो लक्ष्ये तीव्रमे न विसंगतिः ।।१०३।।
कुत्रचित्पंचमत्यक्तो मद्वंद्वस्तीव्रधन्वितः ।
लक्ष्येऽयं द्दश्यते गीतो बुधः कुर्याद्यथोचितम् ।।१०४।।
प्रचारो याद्दशो यत्र ताद्दशं तं समाचरेत् ।
इति संगीतविज्ञोक्तं तत्त्वं नित्यं स्मरेब्दुधः ।।१०५।।
वसंते पंचमोऽल्पः स्यादारोहे लक्ष्यविन्मते ।
रिनिधपमगमगस्वरै रूपं भवेत्स्फुटम् ।।१०६।।
निदौर्बल्यं वसंते तत्प्राचुर्यं परजाह्वये ।
सरिनिसनिधनिभिः परजः प्रस्फुटो भवेत् ।।१०७।। [1]

1. भातखंडे, विष्णु नारायण/श्रीमल्लक्ष्यसंगीतम्/पृ. १३०

संक्षिप्त अर्थ :

विद्वानो के मतानुसार बसंत पूर्वीमेलजन्य एवं संपूर्ण जाति का राग है । इस राग का वादि स्वर तार षड्ज है तथा यह बसंत ऋतुगेय राग है । बसंत मे "म॑ ग" की पुनरावृत्ति से विशेष आनंद प्राप्त होता है और परज से उसकी भिन्नता भी स्पष्ट होती है . इस राग मे गायक प्रायः ललित अंग का प्रयोग करते है, जिसके द्वारा इसका अन्य रागो से भेद स्पष्ट हो जाता है । प्राचीन ग्रंथो मे इस राग की उत्पत्ति मालवगौडमेल से मानी गई है । वर्तमान संगीत मे बसंत एक रात्रीगेय राग है अतः उसमे तीव्र मध्यम कि उपस्थिती सुसंगत है । कही कही यह राग पंचम रहित, दोनो मध्यमो और तीव्र धैवत से युक्त गाया जाता है । संगीतज्ञो द्वारा प्रतिपादित यह तत्त्व नित्य स्मरणीय है कि जहां जैसा प्रचार हो, राग का वैसा ही व्यवहार किया जाना चाहिए । विद्वानो ने बसंत राग के आरोह मे पंचम को अल्प माना है । "रें नि ध प म॑ ग म॑ ग" स्वरो से बसंत राग का स्वरूप स्पष्ट हो जाता है । बसंत राग मे निषाद दुर्बल एवं अल्प होता है । परज मे निषाद का बहुत्व है ।

"सां रें नि सां नि ध नि" इस स्वर समूह से परज राग स्पष्ट होता है ।

४.५.१. राग बसंत के संबंध मे पंडित विष्णु नारायण भातखंडे जी का मत

प्राचीन संस्कृत ग्रंथों मे इस राग का उल्लेख पाया जाता है । पंडित भातखंडे जी के अनुसार बसंत राग के संबंध मे निम्न मतभेद बताये है :

१) यह राग मारवा थाट के अंतर्गत माना गया है व इसकी जाती संपूर्ण है ।

२) इसका थाट मारवा एवम् पंचम वर्ज माना गया है ।

३) इसे पूर्वी थाट का माना गया है परंतु केवल तीव्र मध्यम का प्रयोग माना गया है ।

४) कोई विद्वान इस मे दोनों मध्यम का प्रयोग मानते है ।

५) कोई इसमें कोमल गंधार का प्रयोग मानते है ।

पंडित भातखंडे जी इस राग को पूर्वी थाट का राग मानते है । बसंत राग मे

ललीत अंत का प्रयोग किया जाता है जो इस प्रकार है नि़ सा, म म, म म॑ म ग इस स्वर संगति के प्रयोग से बसंत राग को परज से अलग करने मे सहायता प्राप्त होती है ।

बसंत और परज कि अलग अलग स्वर संगतियों के बार`मे पंडित जी ने चर्चा कि है । सां नि ध प इसे परज राग मे प्रयोग करते समय "सां" पर रूककर नि ध प जलद गती से गाया बजाया जाता है । बसंत राग मे सां नि ध प यह धीमी गति से गाते हुए प ग कि मींड का प्रयोग किया जाता है और बाद में म॑ ग, म॑ , ग का प्रयोग करते हुए अवरोह किया जाता है ।

म॑ ग, रे सा अथवा ग म॑ ध ग म॑ ग, रे सा इस प्रकार मध्य सप्तक के षड्ज पर ठहराव किया जाता है । तार षड्ज पर जाने के लिए म॑ ध, रें सां अथवा म॑ ध सां का प्रयोग बताया गया है । बसंत यह गंभीर प्रकृति का राग है और इसमें मींड का प्रयोग अधिक किया जाता है । ललितांग का प्रयोग बसंत मे इस प्रकार किया जाता है ।

सां, नि ध प, प, म॑ प, म॑ ग, म॑ ग, नि ध प, म॑ ग, म॑ ग रे सा, नि़ सा, म, म, म॑ म ग, म॑ ध रें, सां, सां, रें नि ध प, म॑ ग, म॑ ग, ग म॑ ध ग म॑ ग, रे सा

परज मे नि ध नि यह प्रयोग किया जाता है और बसंत मे ध नि ध इस प्रकार प्रयोग किया जाता है । एक मतानुसार कई विद्वान इस राग मे तीव्र धैवत का प्रयोग भी करते है । [1]

४.५.२. राग बसंत का स्वर विस्तार एवं रागांग पूर्वी का विश्लेषण

१. स्वर विस्तार (पंडित भातखंडे, क्रमिक पुस्तक मालिका)

१) नि़ सा, ग , म॑ ग, म॑ ध, रें, सां, नि ध, प, म॑ ग, म॑ ग, ग म॑ ध ग म॑ ग, रे सा

२) सा, रे सा, ग, म॑ ग, म॑ ध सां, नि ध, प, म॑ ग, म॑ ग, नि, म॑ ग, म॑ ग रे सा

३) सा ग, म॑ ध सां, नि ध प, म॑ ध नि ध प, ध प, म॑ ग म॑ , ग, नि ध म॑ ग, म॑ ग रे सा, नि़ सा, [सा]म, म, म॑ [ग]म ग, ग म॑ ध सां, रें, सां

1. भातखंडे, विष्णु नारायण/हिंदुस्थानी संगीत पद्धती/पृ. १९३,१९७

४) म॑ ध सां, नि ध प, नि ध रें नि ध प, प (प), म॑ ग म॑ , ग, ग म॑ ध ग म॑ ग रे सा, सा [म॑] ग म॑ ध सां, म॑ ध रें, सां

५) सां (सां), नि ध, ध नि ध, म॑ [नि]ध सां, नि ध, ध नि रें म॑ , गं, रें, सां, (सां), नि ध, सां, नि ध प, प (प), म॑ ग, म॑ , ग, नि नि ध म॑ ग रे सा, सा, ग म॑ ध नि रें गं, रें, सां [1]

विश्लेषण :

इस उपरोक्त स्वर विस्तार के सुक्ष्म अध्ययन से पूर्वी रागांग वाचक स्वर संगतियों का प्रयोग दिखाई देता है । इस स्वर विस्तार से निम्न पूर्वी रागांग कि स्वर संगतियाँ प्राप्त होती है :

१) म॑ ध सां   २) नि ध प

३) म॑ ग रे सा   ४) म॑ ध नि ध प

५) [नि]ध रें नि ध प

इस प्रकार बसंत के स्वर विस्तार मे पूर्वी रागांग का विपुल मात्रा मे प्रयोग दिखाई देता है । इसके अलावा बसंत कि विशिष्ट रागांग वाचक स्वर संगतियों का प्रयोग किया गया है जो इस प्रकार है :

१) म॑ ध रें सां   २) म॑ ग, म॑ ग

३) ग म॑ ध ग म॑ ग   ४) ऩि सा, [सा]म, म, म॑ [म]मग

इस प्रकार बसंत कि अपनी विशिष्ट स्वर संगतियां और पूर्वी रागांग कि स्वर संगतियों के मिश्रण से इस राग कि रचना हुई है ऐसा स्पष्ट होता है । इसके साथ हि बसंत मे ललित अंग से दोनो मध्यम का प्रयोग भी इस स्वर विस्तार मे किया गया है ।

1. भातखंडे, विष्णु नारायण/क्रमिक पुस्तक मालिका/पृ. ८१३

४.५.३. राग बसंत कि बंदिशे एवं रागांग पूर्वी का विश्लेषण

१. फगवा ब्रिज देखन (क्रमिक पुस्तक मालिका)

ताल : त्रिताल

स्थायी : फगवा ब्रिज देखन को चलोरी, फगवे मे मिलेंगे कुंवर कान जहां

बाट चालत बोले कगवा

अंतरा : आई बहार सकल बन फूले, रसिले लाल को ले अगवा [1]

स्थायी

														(ध)मं	ध
														फ	ग
0				3				x				2			
(ध)सां	नि	ध	प	(मं)प	-	(ग)म	म	मं	ध	सां	सां	रें	सां	-	मंध
वा	ऽ	ब्रि	ज	दे	ऽ	ख	न	को	ऽ	च	लो	री	ऽ	ऽ	फग
0				3				x				2			
(ध)सां	नि	ध	प	(मं)प	-	(ग)मं	ग	ग	मं	ध		-	ग	रे	सा
वे	ऽ	मे	मि	लें	ऽ	गे	ऽ	मं				ऽ	न	ज	हां
0				3				x				2			
(सां)नि़	सा	ग	ग	(ध)मं	ध	सां	-	सां	-	नि	ध	नि	ध	(ध)मं	ध
बा	ऽ	ट	च	ल	त	बो	ऽ	ले	ऽ	क	ग	बा	ऽ,	फ	ग
0				3				x				2			

अंतरा

(ग)मं	-	ग	ग	(ध)मं	-	ध	मंध	(ध)सां	सां	सां	सां	(नि)सां	रें	सां	-
आ	ऽ	ई	ब	हा	ऽ	र	सऽ	क	ल	ब	न	फू	ऽ	ले	ऽ
0				3				x				2			
(सां)नि	रें	गं	रें	गं	रें	सां	-	सां	-	नि	ध	नि	ध	(ध)मं	ध
र	सि	ले	ला	ऽ	ल	को	ऽ	ले	ऽ	अ	ग	वा	ऽ,	फ	ग
0				3				x				2			

1. भातखंडे, विष्णु नारायण/क्रमिक पुस्तक मालिका/पृ. ३८३

विश्लेषण :

यह बसंत कि एक प्रसिद्ध बंदिश है जीसे कई विद्वान कलाकारों ने गाया है । इस बंदिश मे गोपि कि भगवान क्रिष्ण के प्रति भक्ति के भाव उजागर हुए है । होरी खेलते हुए क्रिष्ण के दर्शन कि आतुरता व्यक्त कि गई है । रागानुरूप बसंत ऋतु मे नव पलवित फुलों का भी वर्णन इस मे किया गयाँ है ।

पूर्वी रागांग कि दृष्टि से इस बंदिश के सुक्ष्म अध्ययन से निम्न स्वर संगतियों का प्रयोग दिखाई देता है :

१) मं ध॒ सां   २) नि ध॒ प

३) नि रें॒ गं रें॒ गं रें॒ सां

इसके अलावा बसंत राग कि विशिष्ट स्वर संगतियों का प्रयोग भी दिखाई देता है जो इस प्रकार है :

१) मं ध॒ सां सां रें॒ सां   २) प – मं ग ग मं ध॒ मं – ग

३) नि़ सा ग ग   ४) नि ध॒ मं ध॒

२. कान्हा रंगवा न डारो (पंडित दिनकर कायाकिणी)

ताल : त्रिताल

स्थायी : कान्हा रंगवा न ड़ारो,

भीजत मोरी सारी चुनरिया, मैं कैसे घर जाऊँ ।

अंतरा : पैया परत तोसे बिनती करत,

कान्हा ड़ारो ना ड़ारो ना रंग,

अंग भीजत रंग से भरी मोरी सुरतिया,

ले कैसे घर जाऊँ ।। [1]

1. कायकिणी, दिनकर/राग रंग/पृ. ११६

स्थायी

														(ध॒)म॑	–
														का	ऽ
o				3				x				2			
(नि)ध॒	सां	–	नि	ध॒	प	–	म॑ग	(ग)म॑	–	–	–	ग	गम॑	ध॒	ध॒
न्हा	ऽ	ऽ	रं	ग	वा	ऽ	नऽ	ड़ा	ऽ	ऽ	ऽ	रो	ऽऽ	ऽ	भी
o				3				x				2			
म॑	ग	रे॒	सा	–	नि़	सा	म	–	ग	म	म॑	(ग)म	ग	–	(म॑)ग
ज	त	मो	री	ऽ	सा	री	ऽ	ऽ	चु	न	रि	या	ऽ	ऽ	मैं
o				3				x				2			
(ध॒)म	ध॒	म॑	(नि)ध॒	सां	–	(नि)सां	रें॒	(रें॒)सां	नि	सां	नि	ध॒	–	(ध॒)म॑	–
कै	ऽ	ऽ	से	ऽ	ऽ	घ	र	जा	ऽ	ऽ	ऊँ	ऽ	ऽ;	का	ऽ
o				3				x				2			

अंतरा

														(ध॒)म॑	–
														पै	ऽ
o				3				x				2			
(नि)ध॒नि	सां	–	सां	(नि)सां	सां	सां	सां	(नि)सां	रें॒	सां	रें॒	नि	सां,	सां	(नि)सां
याऽ	ऽ	ऽ	प	र	त	तो	से	बि	न	ति	क	र	त,	का	न्हा
o				3				x				2			
–	(सां)निनि	–सां	रें॒	नि	सां	निध॒	प	–	(म॑)पप	ग	म॑	ग	ग,	(म॑)ध॒	–
ऽ	डारो	ऽना	डा	रो	ना	ऽरं	ग	ऽ	अंग	भी	ऽ	ज	त,	रं	ऽ
o				3				x				2			
म॑	ग	रे॒	सा	–	(नि़)सा	(सा)म	–	–	ग	म	म॑	म	ग	–,	(म॑)ग
ग	से	भ	री	ऽ	मो	री	ऽ	ऽ	सु	र	ति	या	ऽ	ऽ,	ले
o				3				x				2			
(ध॒)म॑	ध॒	म॑	(नि)ध॒	सां	–	सां	रें॒	(रें॒)सां	नि	सां	नि	ध॒	–;	(ध॒)म॑	–
कै	ऽ	ऽ	से	ऽ	ऽ	घ	र	जा	ऽ	ऽ	ऊँ	ऽ	ऽ;	का	ऽ
o				3				x				2			

विश्लेषण :

इस बंदिश के रचनाकार स्व. दिनकर कायकिणी जी है । भगवान क्रिष्ण और गोपीयों का होरी खेलते समय का संवाद एक बंदिश के रूप मे अप्रतिम रूप से लिखा गया है। इस बंदिश कि महत्त्वपूर्ण बात यह है कि शुद्ध मध्यम का प्रयोग ललीत अंग एवम् पूर्वी अंग दोनों अंगो से किया गया है ।

पूर्वी रागांग के दृष्टिकोण से इस बंदिश कि स्वरलिपी मे निम्न स्वर संगतीयों का प्रयोग दिखाई देता है :

१) म॑ ध॒ सां　　　२) नि ध॒ प

३) म॑ ग रे॒ सा　　　४) पप ग म ग

५) ध॒ म॑ ग रे॒ सा

राग बसंत कि कई महत्त्वपूर्ण विशिष्ट स्वरसंगतियों का प्रयोग इस बंदिश के दिखाई देता है जो इस प्रकार से है :

१) म॑ग $^{\text{ग}}$म॑ ग　　　३) नि़ सा म – ग म म॑ $^{\text{ग}}$म

३) सां रें॒ सां रें॒ नि सां　　　४) $^{\text{रें}}$सा नि सां नि ध॒

३. शबद सुनावे कोयलिया (आगरा घराने कि बंदिश)

ताल : त्रिताल

स्थायी : शबद सुनावे कोयलिया, कैसे कर आवे निंदरीया मा ।

अंतरा : एक तो रैन बड़ी, दुजे पिया नहिं आये,

तीजे दोरनीयाँ आन सतावे जनम जरीया मा ।। [1]

स्थायी

ध॒	सां	नि	ध॒	प	(प)	म॑	ग	म॑	ध॒	नि	सां	रें॒	सां,	म॑	ध॒
श	ब	द	सु	ना	(ऽ)	वे	ऽ	को	ऽ	य	लि	या	ऽ,	कै	से
०				3				x				2			
नि	ध॒	म॑	ग	सा	–	म	म	म	–	ग	–	ध॒	नि,	म॑	ध॒
क	र	आ	वे	निं	ऽ	द	री	या	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ,	मा	ऽ
०				3				x				2			

1. मेहता, रमणलाल/आगरा घराना/पृ. ९५

अंतरा

म	म	ध	सां	-	सां	-	रें	सां	-	-	-	-	-	सां	सां
ए	क	तो	रै	ऽ	न	ऽ	ब	ड़ी	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	दु	जे
o				3				x				2			
सां	सां	सां	सां	निसां	रेंसां	ध	-	ध	नि	रें	गं	मं	गं	रें	सां
पि	या	न	हिं	आऽ	ऽऽ	ये	ऽ	ती	ऽ	जे	दो	र	नी	या,	ऽ
o				3				x				2			

विश्लेषण :

यह आगरा घराने कि बंदिश है इसकी स्वरलिपी से पूर्वी रागांग वाचक एवम बसंत राग कि महत्त्वपूर्ण स्वर संगतियों कि प्राप्ती होती है । बसंत ऋतु का वर्णन और नायक के विरह मे नाईका कि व्याकुल मनोदशा का सुंदर वर्णन इस बंदिश के किया गया है ।

म ध नि सां रें सां, म ध सां, ध नि रें गं, सां नि ध म ध म ग

यह पूर्वी रागांग वाचक स्वर संगतियों का प्रयोग दिखाई देता है ।

ध सां नि ध प (प) म ग, सा - म म, सां रें सां इन स्वर संगतियों से बसंत राग स्पष्ट होता है ।

४.६ राग गौरी – श्री मल्लक्ष्यसंगीतम् मे प्राप्त विवरण :

गौरी

पूर्वीमेलसमुत्पन्ना द्वितीया गौरिरागिणी ।
आरोहे गधहीना सावरोहे समग्रिका ।।२१।।
ऋषभः संमतो वादी संवादी पंचमो भवेत् ।
गानमस्याः समीचीनं दिनान्ते सर्वरक्तिदम् ।।२२।।
श्रीरागस्य प्रसिद्धांगं रागेऽत्राप्युपलभ्यते ।
मंद्रस्थानगतो निः स्यात्प्रायो रागांगवाचकः ।।२३।।

आदिशंति पुनः केचिदत्र धैवतयोजनम् ।

अनुलोमे भवेद्येन श्रीरागभित्परिस्फुटा ।।२४।।

श्रीरागे ऋषभो वादी गौरीस्यात्पंचमांशिका ।

इत्याहुः केचिदप्यन्ये रागभेदोपलब्धये ।।२५।। [1]

संक्षिप्त अर्थ :

पूर्वी मेल से उत्पन्न एक अन्य राग गौरी भी है, जिसके आरोह मे गंधार और दैवत वर्जित है तथा अवरोह संपूर्ण है । इस राग का वादि स्वर ऋषभ व संवादि पंचम है गायन समय दिन का अंतिम प्रहर है । इस राग मे श्री अंग का प्रयोग किया जाता है । मंद्र निषाद का प्रयोग गौरी रागांग वाचक होता है । कुछ विद्वान इसके आरोह में धैवत का प्रयोग मानते है जिससे यह श्री राग से भिन्न हो जाए । कुछ संगीतज्ञ राग भिन्नता को स्पष्ट करने के लिए श्री राग मे ऋसभ को एवं गौरी मे पंचम को वादि स्वर मानते है ।

४.६.१. राग गौरी के संबंध मे विद्वानो के मत

१. पंडित विष्णु नारायण भातखंडे जी का मत

गौरी यह एक प्राचीन राग माना गया है । गौरी राग का एक प्रकार भैरव थाट का है दुसरा पूर्वी थाट का है । गौरी यह श्री राग कि प्रसिद्ध रागीणी है । कई प्राचीन ग्रंथ गौरी को भैरव थाट का राग मानते है । पंडित भातखंडेजी के अनुसार सायंकाल के समय पर गाए जानेवाले पूर्वी थाट के प्रकार का नामकरण "श्री गौरी" किया जाना चाहिए परंतु ऐसा संयुक्त नाम प्रचार मे नही दिखाई देता है । कालिंगडा से गौरी का स्वरूप अलग रखने के लिए रे॒ रे॒ सा, ऩि ध़॒ ऩि का प्रयोग किया जाता है । सा ऩि ध़॒ ऩि रे॒ ग रे॒ म॑ , ग रे॒ सा रे॒ ऩि, सा यह गौरी कि प्रसिद्ध तान है । गौरी को दुपहर का कालिंगडा इस प्रकार भी समझा गया है । मंद्र पंचम से मध्य पमचम तक गौरी राग का क्षेत्र माना गया है । गौरी का वादी स्वर रे और संवादी स्वर पंचम माना गया है । यह कोई तीव्र मध्यमके प्रयोग से गाते है और कोई दोनो मध्यम के प्रयोग से गाते है । तीव्र मध्यम के साथ गौरी गाने पर उसे पूरिया धनाश्री,

1. भातखंडे, विष्णु नारायण/श्रीमल्लक्ष्यसंगतीम्/पृ. १२३

जेताश्री, मालवी जैसे रागो से अलग रखने पर ध्यान देना अवश्यक है । दोनों मध्यम के प्रयोग के समय उसे पूर्वी राग से अलग रखना होगा । नि़ धु़ नि़ इस स्वर समुदाय का योग्य रूप से प्रयोग तौरी राग मे आवश्यक है । गौरी राग मे निषाद स्वर महत्वपूर्ण है । नि़ , सा रे ग इस स्वर संगति का प्रयोग इस राग मे किया जाता है ।[1] इस राग के दो उठाव क्रमिक पुस्तक मालीका मे दिए गए है, जो इस प्रकार है :

१) सा नि़ धु़ नि, रे ग, रे मं ग रे, सा रे नि सा

२) मं मं ग रे सा, नि़ धु़ नि़, रे, रे ग रे सा, मं धु़ नि़, सा रे , रे रे, ग रे सा, सा सा प प, प मं प धु, मं ग मं ग रे सा

पंडित भातखंडे जी के अनुसार तीव्र मध्यम युक्त गौरी का स्वरूप इस प्रकार है :

– सा नि़ धु़ नि, रे ग रे मं , ग रे सा रे, नि़ नि़ सा, सा सा प प, मं मं प धु, मं ग – रे, सा नि़ धु़ नि़ धु़ धु़ मं़ धु, नि़ नि़ सा –, रे रे सा मं , ग रे सा –

२. डॉ. श्रीमति वैजयंती जोशी जी का मत

गौरी राग दो तरह से गाया जाता है । शुद्ध मध्यम की गौरी व तीव्र मध्यम की गौरी । इनमे सिर्फ यदि एक मध्यम स्वर को बदला जाए तो दोनो का चलन एक जैसा है । गौरी का मुख्य चलन इस प्रकार है :

– सा रे नि़ सा, नि़ धु़ नि़, रेग – सारे – नि़सा, प, मं गरेग पधुनि – पधु – मं प – मं गरेग, सा रे – नि़सा

दोनो प्रकार की गौरी मे यही चलन दिखाई देता है ।

१) शुद्ध मध्यम की गौरी – इसे भैरव अंग की गौरी अथवा "हिन्दु गौरी" इस नाम से जाना जाता है । मंदिरो मे इसका गायन होता है, ऐसा माना जाता है । इसे शुभ्रा गौरी भी कहते है । इसके चलन मे कालिंगडा राग का थोडा आभास निर्माण होता है ।

– ग म प – म ग रे ग, प धु नि – प धु, – म प, म ग म ग रे ग, सारे नि़सा सारेग, ग

1. भातखंडे, विष्णु नारायण/हिंदुस्थानी संगीत पद्धती/पृ. ६५,६६

म प, म ग म, ग रे ग, सारे, निसा, ग म प ध प, म ग रे ग, प ध नि, प ध म प, म ग रे ग, सारे निसा, ग म पध नि – प ध म प, प ध नि सां, नि ध नि, प ध म प, ग म प प म ग रे ग, सारे निसा, ग म प ध नि सां, सा रें ग, सां रें, निसां, रें नि सां, नि ध नि – प ध म प, ग म प ध नि – प ध म प, ध म प, म ग रे ग, ग म ध ध, प प म, ग रे ग, सारे निसा

२) तीव्र मध्यम की गौरी – इसे शुद्धा गौरी या आसा गौरी के नाम से जाना जाता है । इसे शुद्धा गौरी इसलिए कहां जाता है क्योंकि मुस्लिम गायक तीव्र मध्यम का ही शुद्ध सप्तक मानते थे । इसी कारण तीव्र मध्यम की गौरी का नाम शुद्धा गौरी प्रचलित हुआ होगा ऐसी मान्यता है । वही गायक शुद्ध मध्यम की गौरी को "सुब्री गौरी" शुभ्र का भ्रष्टरूप कहने लगे । इसी कारण शुद्धा गौरी को आसा गौरी जिसमे तीव्र मध्यम का प्रयोग किया जाता है और शुभ्रा गौरी जिससे शुद्ध मध्यम का प्रयगो किया जागा है यह गौरी के दो मुख्य प्रकार माने गए है ।

– सा, रे नि सा, नि ध नि, ग – सारे, निसा, नि, रेग मं मं गरेगमं प ध मं प, मं ग मं , ग रे ग – सारे निसा नि रे ग रे ग मं प, मं , ध नि सां, नि सां रें नि सां, नि ध नि, नि रें गं सारें निसां रें नि सां – नि ध नि, प ध – मं प, प मं ग म ध नि पध मंप , ग मं ध नि – – प, ध प मं प, मं ग रे ग, ग रे ग मं प, मं ग मं – ग रे ग, सारे – निसा [1]

४.६.२. राग गौरी का स्वर विस्तार एवं रागांग पूर्वी का विश्लेषण

१. स्वर विस्तार (क्रमिक पुस्तक मालिका)

– सा, रे नि सा, ध नि, रे ग, मं ग रे सा, रे नि सा

– सा, ध नि, रे सा, रे नि सा, ध नि, मं प नि, रे ग, मं ध मं ग, रे सा रे नि, सा

– सा सा प प, ध मं , रे ग, सा रे नि, ध नि रे ग, मं ग रे, सा रे नि सा

– मं ध नि ध प, रे ग, सा रे नि, सा रे, प मं ग रे, नि सा

1. जोशी, वैजयंती र./राग मंथन/पृ. १८,१९

– मं ध नि, सां, रें, सां रें नि सां, रें गं, रें, नि सां, ध प, मं प ध मं प, रे ग, रे मं ,

ग रे सा, रे ऩि सा [1]

विश्लेषण :

उपरोक्त स्वर विस्तार मे पूर्वी रागांग कि निम्न स्वर संगतियों का समावेश दिखाई देता है :

१) मं ध मं ग २) सा सा प प ३) रे ग

४) ध नि रे ग ५) मं ध नि ध प ६) प मं ग रे

७) मं ध नि ८) ध प मं प ध मं प

इसके अलावा राग गौरी कि मंद्र निषाद को अधिक महत्त्व प्रदान करती हुई १) रे ऩि सा २) ध़ ऩि ३) सा रे ऩि का प्रयोग भी दिखाई देता है जो गौरी उपांग कि विशेषता है ।

४.६.३. राग गौरी कि बंदिशे एवं रागांग पूर्वी का विश्लेषण

१. मोहे बाट चलत (क्रमिक पुस्तक मालिका)

ताल : त्रिताल

स्थायी : मोहे बाट चलत छेडत है बिहारी रे,

निरख हसत ब्रिज नारी

अंतरा : लाज कि मारी इन गोपियन में

सुधि बुधि गई मोरि सारी रे

देखो चांद ए निठुर श्याम ने

उचक कांकरी मारी रे

निरख हसत ब्रिज । [2]

1. भातखंडे, विष्णु नारायण/क्रमिक पुस्तक मालिका/पृ. ५१७
2. भातखंडे, विष्णु नारायण/क्रमिक पुस्तक मालिका/पृ. ४२२

स्थायी

															सा
															मो
2				०				3				x			
–	नि़	ध़	नि़	सा	ग	ग	(म॑)ध	म॑	ग	रे	सा	नि़	–	सा	–
ऽ	हे	बा	ट	च	ल	त	छे	ड़	त	है	बि	हा	ऽ	री	ऽ
2				०				3				x			
–	–	सारे	सानि़		धध़	म॑	ध़	नि़	नि़	नि़	नि़	रे	सा	(सा)रे,	सा
ऽ	ऽ	रेऽ	ऽऽ	ऽ	निर	ख	ह	स	त	ब्रि	ज	ऽ	ना	रि	मो
2				०				3				x			

अंतरा

	रे	नि़	रे	ग	–	म॑	–	–	मम॑	म	म॑	ग	ग	(ध)मम॑	मग
ऽ	ला	ज	कि	मा	ऽ	री	ऽ	ऽ	इन	गो	पि	य	न	मेंऽ	ऽऽ
०				3				x				2			
	रेरे	नि़	रे	ग	ग	रे	सा	नि़	–	सा	–	–	–	सारे	नि़सा
ऽ	सुधि	बु	धि	ग	इ	मो	रि	सा	ऽ	री	ऽ	ऽ	ऽ	रेऽ	ऽऽ
०				3				x				2			
	सा	नि़	रे	ग	ग	म	–	म	म॑	म	म॑	ग	ग	मम॑	मग
ऽ	दे	खो	चां	ऽ	द	ए	ऽ	नि	ठु	र	श्या	ऽ	म	नेऽ	ऽऽ
०				3				x				2			
रे	रे	नि़	रे	म॑	ग	रे	सा	नि़	–	सा	–	–	–	सारे	(म॑)सानि़
उ	च	क	कां	ऽ	क	री	ऽ	मा	ऽ	री	ऽ	ऽ	ऽ	रेऽ	ऽऽ
०				3				x				2			
–	धध़	म॑	ध़	नि़	नि़	नि़	नि़								
ऽ	निर	ख	ह	स	त	ब्रि	ज								
०				3											

विश्लेषण :

उपरोक्त बंदिश के शब्द इस राग कि चंचल प्रकृति को स्पष्ट करते हुए राग

स्वरूप के अनुकूल है । भगवान क्रिष्ण और गोपीयों कि लीलाओं का वर्णन इस बंदिश मे किया गया है । रागांग पूर्वी कि कई स्वर संगतियों का प्रयोग इस बंदिश कि स्वरलिपी मे किया गया है जो इस प्रकार है :

१) मं ग रे॒ सा २) नि़ सा

३) मं़ ध॒ नि़ ४) नि़ रे॒ ग

गौरी उपांग कि दृष्टि से भी कई महत्त्वपूर्ण स्वर संगतियाँ हमे इस बंदिश कि स्वरलिपी से प्राप्त होति है । इस बंदिश मे विशेषतः शुद्ध मध्यम का ललीत अंग से प्रयोग किया गया है ।

गौरी उपांग कि प्राप्त स्वर संगतियाँ इस प्रकार है :

१) नि़ ध़॒ नि़ २) सा रे॒ सा नि़

३) नि़ रे॒ ग ग रे॒ सा नि़

शुद्ध मध्यम का प्रयोग

१) ग – म – ममं ममं ग २) सा नि़ रे॒ ग ग म – म मं म मं गग

२. भटकत काहे फिरे (क्रमिक पुस्तक मालिका)

ताल : त्रिताल

स्थायी : भटकत काहे फिरे रे बावरे

नश्वर तन को कौन भरोसो

खटपट यूंहि करे बावरे

अंतरा : करम लिखो उतनो हि मिलेगो

लाखो जतन करे

चतुर कृपा बिन कछु नहि साधत

काहे को सोच करे बावरे [1]

1. भातखंडे, विष्णु नारायण/क्रमिक पुस्तक मालिका/पृ. ४२३

स्थायी

म॑	म॑	ग	रे॒	नि़	-	सा	ध़॒	नि़	-	-	रे॒	-	रे॒	सा	-
भ	ट	क	त	का	ऽ	हे	फि	रे	ऽ	ऽ	बा	ऽ	व	रे	ऽ
०				3				x				2			
म़॑	-	ध़॒	ध़॒	नि़	नि़	सा	-	रे॒	-	रे॒	रे॒	(ग)रे॒	-	सा	-
न	ऽ	श्व	र	त	न	को	ऽ	कौ	ऽ	न	भ	रो	ऽ	सो	ऽ
०				3				x				2			
सा	सा	प	प	म॑	-	प	ध॒	म॑	ग	रे॒	म॑	ग	रे॒	सा	-
ख	ट	प	ट	यूं	ऽ	हि	क	रे	ऽ	ऽ	बा	ऽ	व	रे	ऽ
०				3				x				2			

अंतरा

(ध)म॑	म॑	म॑	ग	(ध)म॑	-	ध॒	म॑ध॒	(सां)नि	-	सां	सां	सां	-	सां	-
क	र	म	लि	खो	ऽ	उ	त	नो	ऽ	हि	मि	ले	ऽ	गो	ऽ
०				3				x				2			
(सां)नि	-	(सां)नि	-	(सां)नि	नि	सां	रें॒	(सां)नि	-	सां	-	नि	ध॒	प	-
ला	ऽ	खों	ऽ	ज	त	न	क	रे	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ
०				3				x				2			
प	म॑	प	ध॒	म॑	-	म॑	ग	रे॒	ग	म॑	ग	रे॒	-	सा	सा
च	तु	र	कृ	पा	ऽ	बि	न	क	छु	न	हिं	सा	ऽ	ध	त
०				3				x				2			
सा	-	प	प	(ध)म॑	-	प	ध॒	(ध)म॑	-	ग	म॑	ग	रे॒	सा	(म॑)-
का	ऽ	हे	को	सो	ऽ	च	क	रे	ऽ	ऽ	बा	ऽ	व	रे	ऽ
०				3				x				2			

विश्लेषण :

इस बंदिश का विषय आध्यात्म से जुडा हुआ है । रचनाकार यह समझा रहे है कि इस देह का कोई भरोसा नहि है जो करम मे लिखा है उतना ही मनुष्य को प्राप्त होता है। इसलिए व्यर्थ कि चिंता, मे मनुष्य जीवन व्यर्थ नही करना चाहिए । इस राग का प्रमुख

गायन श्रेत्र मंद्र और मध्य सप्तक है और बंदिश के शब्दों के संयोग से एक शांत वातावरण कि निर्मिती उत्पन्न होती है । पूर्वी रागांग कि दृष्टि से स्थाई मे सा सा प प मं – प ध मं ग का प्रयोग दिखाई देता है । अंतरे कि स्वरलिपी मे मं – ध मं ध नि – सां, सां – नि ध प, प मं प ध, सा – प प इन पूर्वी रागांग वाचक स्वर संगतियों का प्रयोग किया गया है ।

गौरी उपांग कि दृष्टि से

१) मं मं ग रे नि़ २) मं ग रे मं ग रे सा

३) नि नि सां रें नि ४) मं ग रे ग मं ग रे सा

इस स्वर संगतियों का प्रयोग किया गया है ।

४.७ राग जैताश्री – श्री मल्लक्ष्यसंगीतम् मे प्राप्त विवरण :

जेताश्री :

पूर्वीमेलसमुत्पन्ना जेताश्रीर्बहुसंमता ।
आरोहे रिधवर्ज्यं स्यादवरोहे समग्रकम् ।।७२।।
गांधारांशाऽथवा पांशा गीयते लक्ष्यवर्त्मनि ।
गानं सुसंमतं तस्याः सायंकाले मनोहरम् ।।७३।।
मारवामेलजां चापि क्वचिदेनां ब्रुवन्ति हि ।
लक्ष्य मार्गमनुल्लंघ्य बुधः कुर्यात्स्वनिर्णयम् ।।७४।।
वराटी देशकारश्च धवलाख्या ततः परम् ।
सप्रमाणं मिलंत्यत्रैत्यूचुर्गानविशारदा : ।।७५।।
पूर्वीमेलसुसंजाता प्रारोहे रिधवर्जिता ।
जयश्रीः कीर्तिता तत्र पारिजातनिबंधके ।।७६।।
शुद्धरामक्रियामेले सोमनाथेन धीमता ।
जेताश्री रागिणी प्रोक्ता रिधाल्पा प्रातरिष्टदा ।।७७।।

गौरीमेलसमुत्पन्ना जयंतश्रीः प्रकीर्तिता ।

प्रारोहे रिधसंत्यक्ता हृदयेशेन कौतुके ।।७८।। [1]

संक्षिप्त अर्थः

पुर्वीमेल से उत्पन्न राग जैताश्री के आरोह मे ऋषभ, धैवत वर्जित है तथा अवरोह संपूर्ण है । प्रचार मे इसमे गंधार अथवा पंचम को वादि माना जाता है । इस राग का गायन समय सायंकाल है । कुछ विद्वान इसे मारवामेल से उत्पन्न राग मानते है । संगीतज्ञो के मतानुसार जैताश्री मे वराटी देशकार तथा धवला का सप्रमाण मिश्रण है । संगीत पारिजात ग्रंथ मे जयश्री नामक राग का वर्णन प्राप्त है, जो पूर्वी मेल से उत्पन्न है तथा जिसके आरोह मे ऋषभ, धैवत वर्जित है । सोमनाथ ने जैताश्री को शुद्ध रामक्रियामेल से उत्पन्न एवं अल्प ऋषभ धैवत युक्त प्रातः कालिन रागिणी कहां है । हृदयनारायण देव ने हृदय कौतुक ग्रंथ मे गौरी मेल से उत्पन्न जयंतश्री को आरोह मे ऋषभ धैवत रहित बताया है।

४.७.१. राग जैताश्री के संबंध मे विद्वानो के मत

१. पंडित विष्णु नारायण भातखंडे जी का मत

प्राचीन संस्कृत ग्रंथो मे जैताश्री, जयश्री, जयंतश्री, जैसे नाम इस राग के पाये जाते है । जैताश्री राग के संदर्भ मे निम्नमत दिखाई देते है :

१) जैताश्री राग मे धैवत शुद्ध रखते हुए उसे मारवा थाट का राग माना गया है ।

२) इसे पूर्वी थाट का राग माना जाए परंतु आरोह अवरोह संपूर्ण है ।

३) इसका थाट पूर्वी है परंतु आरोह मे रे और ध वर्ज है ।

४) इसे पूर्वी थाट का मानते हुए इसके आरोह मे धैवत वर्ज है ।

पंडित भातखंडेजी के अनुसार इस राग मे धैवत कोमल मानना उचित है और आरोह अवरोह संपूर्ण मानने से यह पूरिया धनाश्री के समीप यह राग जाने कि संभावना बढ जाती है । उपरोक्त तीसरे और चौथे मत का भातखंडेजी स्वीकार

1. भातखंडे, विष्णु नारायण/श्रीमल्लक्ष्यसंगीतम्/पृ. १२८

करते है । यह पूर्वांगप्रधान राग है इसका वादी स्वर कोई गंधार मानते है तो कोई पंचम । [1]

२. पंडित गींडे जी का मत

पंडित गींडे जी के अनुसार भारतीय संगीत के कुछ राग थाट परिवर्तन से बनते है । जिसे "थाट फेरना" कहते है । उसी मे से एक प्रकार जैताश्री है । इनके मतानुसार यदि मुलतानी को पूर्वी थाट मे गाया जाए तो जैताश्री राग का निर्माण होता है । [2]

४.७.२. राग जैताश्री का स्वर विस्तार एवं रागांग पूर्वी का विश्लेषण

१. स्वर विस्तार (पंडित भातखंडेजी, क्रमिक पुस्तक मालिका)

१) प, ग रे सा, रे सा, नि़, सा ग प, प , प ध मं ग, मं ग, रे सा, मं प़ नि़, सा, ग, मं ग, रे सा, प ग रे सा

२) प मं प, नि़, सा रे रे सा, नि, सां, रें सां, नि रें नि ध प, मं ग प, नि रें नि ध प, मं ध प, मं ग, मं ग रे सा

३) सा, नि़ रे सा, ग, प, मं ध मं ग, प, मं ग, मं ग, रे सा, सा रे सा

४) नि़ रे सा, ग प प, मं ग, रे सा, ग मं ग, रे सा, प नि सां, ग मं ग, प, ध ध प, मं ग, प मं, मं ध मं ग, मं ग, रे सा नि़ सा, ग, रे सा, प मं ग, मं ग, रे सा, प, मं ध प, मं ध, मं ग, नि ध प, मं ग मं ध मं ग, मं ग रे सा

५) मं़ प़ नि़ सा, प़ नि़ सा, रे सा, ग रे सा, मं ग, प, मं ध मं ग, ध प, नि ध प, सां नि ध प, मं ध प, मं ध मं ग, रे सा

६) मं ग मं ध प, सां, रें सां, गं रें सां, नि सां, रें नि ध प, मं प, नि ध प, मं प, मं ग, मं ध मं ग, प ग रे सा [3]

---

1. भातखंडे, विष्णु नारायण/हिंदुस्थानी संगीत पद्धती/पृ. १५३,१५४,१५५
2. गिंडे, के.जी./लेक्चर डेमॉन्सट्रेशन/पूर्वी अंग राग/मीरा म्युजिक
3. भातखंडे, विष्णु नारायण/क्रमिक पुस्तक मालिका/पृ. ५२०

विश्लेषण :

इस स्वर विस्तार मे पूर्वी रागांग वाचक स्वर संगतियों का प्रयोग दिखाई देता है। इस राग के पूर्वांग मे जैत राग और उत्तरांग मे श्री राग का मिश्रण माना गया है । श्री राग कि उत्त्पति पूर्वी थाट से मानी गयी है । इसी कारण पूर्वी राग कि संगतियाँ हमे जैताश्री के स्वर विस्तार मे दिखाई देती है ।

इस उपरोक्त स्वर विस्तार मे प ध म॑ ग, नि रें नि ध प, म॑ ध प का प्रयोग प्रथम दो पंक्तियों मे दिखाई देता है । उसी प्रकार पूर्वी रागांग वाचक अन्य स्वर संगतियों जो इस स्वर विस्तार से प्राप्त होती है, वह इस प्रकार है :

१) म॑ ध म॑ ग   २) म॑ ग रे सा

३) नि़ रे सा   ४) म॑ ध प

५) नि ध प   ६) म॑ ग रे सा

७) रें नि ध प

इस प्रकार इस राग कि रचना का विश्लेषण करने पर यह स्पष्ट है कि सर्व प्रथम श्री राग का संबंध पूर्वी से है और जैत राग के अंग का मिश्रण पूर्वांग मे किया जाता है। इस प्रकार जैताश्री राग कि रचना कि गई है । सुक्ष्म रूप इस राग मे जैत, श्री और पूर्वी कि रागांग वाचक स्वर संगतियों का मिश्रण दिखाइ देता है ।

४.७.३. राग जैताश्री कि बंदिशे एवं रागांग पूर्वी का विश्लेषण

१. भज मन राम चरन (पंडित गजाननबुआ जोशी)

ताल : त्रिताल

स्थायी : भजमन राम चरन दिन रात, काहे को भ्रमत फिरत हो निसदिन
भजन करत अलसाती अलसाती ।

अंतरा : बिरथा जनम गवायो
मूरख सोवत रह्यो दिनरात ।। [1]

1. कशालक, विकास/मालनिया गूँद लावोरी/पृ. ६३

स्थायी

												सा	^पग	प	पम॑
												भ	ज	म	नऽ
x				2				o				3			
म॑ध	-	प	म॑ध	म॑	ग	ध	म॑	ग	-	रे	सा	रे	नि़	ध़	प़
रा	ऽ	म	च	र	न	दि	न	रा	ऽ	ऽ	ती	का	ऽ	हे	को
x				2				o				3			
सा	सा	सा	रे	सा	सा	गसा	ग	प	पम॑	ध	प	सां	सां	सां	रें
भ्र	म	त	फि	र	त	हो	ऽ	नि	सऽ	दि	न	भ	ज	न	क
x				2				o				3			
सां	सां	रें	नि	ध	प	प	ध	म॑	ग	रे	सा				
र	त	अ	ल	सा	ऽ	ती	अ	ल	सा	ऽ	ती				
x				2				o				3			

अंतरा

प	प	सां	-	सां	सां	सां	सांनि	रें	-	सां	-	रेंगं	-	रें	सां
बि	र	था	ऽ	ज	न	म	गऽ	वा	ऽ	यो	ऽ	मूऽ	ऽ	र	ख
x				2				o				3			
रें	नि	ध	प	सांनि	सां	प	ध	म॑	ग	रे	सा				
सो	ऽ	व	त	रऽ	ह्यो	ऽ	दि	न	रा	ऽ	त				
x				2				o							

विश्लेषण :

इस बंदिश कि स्वरलिपी के सुक्ष्म अध्ययन से हमें राग जैत, श्री और पूर्वी रागांग वाचक स्वर संगतियों का प्रयोग दिखाई देता है । बंदिश कि प्रथम पंक्ति कि स्वरलिपी मे सा ^पग प इस स्वरसंगति से राग जैत पम॑ ध – प (पूर्वी) , ध म॑ ग, ध म॑ ग – रे सा (पूर्वी और श्री), रे नि़ ध़ प़ (पूर्वी और श्री) का प्रयोग दिखाई देता है । द्वितीय पंक्ति मे सा सा

रे सा सा ग प (जैत), प म ध प (पूर्वी), प सां सां रें सां सां (श्री), रे नि ध प (पूर्वी और श्री), प ध म ग रे सा (पूर्वी और श्री) । इस प्रकार इस बंदिश कि स्थायी मे पूर्वी रागांग वाचक स्वर संगतियों का स्पष्ट प्रयोग दिखाई देता है ।

इस बंदिश के अंतरे का विश्लेषण करने पर प प सां – (श्री), सांनि रें – सां (पूर्वी और श्री), रें गं – रें सां रें नि ध प (श्री और पूर्वी), सां नि सां प (जैत), ध म ग रे सा (पूर्वी और श्री) इस प्रकार पूर्वी रागांग वाचक स्वर संगतियों का प्रयोग अंतरे मे भी स्पष्ट रूप से किया गया है ।

२. मान न कीजे (क्रमिक पुस्तक मालिका)

ताल : त्रिताल

स्थायी : मान न कीजे अपने पिया सो, मान लीजे अब राधा रानी

अंतरा : तुम तो महा प्रबीन सकल गुन, यह बिनती मोरी मान सयानी [1]

स्थायी

(नि़)सां	–	ग	म	प	–	प	–	प	ध	प	प	म	ग	(ग)म	ग
मा	ऽ	न	न	की	ऽ	जे	ऽ	अ	प	ने	पि	या	ऽ	सों	ऽ
3				x				2				o			
(म)प	–	सां	नि	–	ध	प	प	(प)म	ग	(ग)म	ग	ग	रे	सा	–
मा	ऽ	न	ली	ऽ	जे	अ	ब	रा	ऽ	धा	ऽ	रा	ऽ	नी	ऽ
3				x				2				o			

अंतरा

(म)प	ध	प	सां	सां	–	–	(नि)सां	रें	–	सां	गं	रें	रें	सां	सां
तु	म	तो	म	हा	ऽ	ऽ	प्र	बी	ऽ	न	स	क	ल	गु	न
3				x				2				o			
सां	सां	रें	नि	(ध)नि	ध	प	प	प	म	ग	(ग)म	ग	रे	सा	–
य	ह	बि	न	ती	ऽ	मो	री	मा	ऽ	न	स	या	ऽ	नी	ऽ
3				x				2				o			

1. भातखंडे, विष्णु नारायण/क्रमिक पुस्तक मालिका/पृ. ४५५

विश्लेषण :

इस बंदिश का विषय श्रृंगारीक है । इस बंदिश कि स्वरलिपी मे जैत एवम् श्री अंग का प्रयोग दिखाई देता है । अंतरे कि अंतिम पंक्ति मे सां रें नि नि ध प का प्रयोग है जीसे पूर्वी रागांग से संबंधित मान सकते है । पूर्वी रागांग वाचक स्वर संगतियों का सीधा प्रयोग इस बंदिश कि स्वरलिपी मे नहीं दिखाई देता है ।

४.८ राग त्रिवेणी – श्री मल्लक्ष्यसंगीतम् मे प्राप्त विवरण :

त्रिवेणी

पूर्वीमेलसमुत्पन्ना त्रिवेणी लोकविश्रुता ।
आरोहे चावरोहऽपि मध्यमेन विवर्जिता ।।४६।।
ऋषभोऽत्रभवेद्वादी संवादी पंचमो भवेत् ।
गानं सुसंमतं चास्याः सायंकाले मनोहरम् ।।४७।।
श्रीरागांगेन यग्दीता लक्ष्ये सर्वत्र सांप्रतम् ।
ऋषभस्यैव वादित्वं भवेद्युक्तं सतां मते ।।४८।।
संगतिर्गपयोः सिद्धा मध्यमाभावतोऽत्र सा ।
अवरोहेण वर्णेन रागिणीयं मनो हरेत् ।।४९।।
गौरीमेलसमुत्पन्ना त्रिवेणी मस्वरोज्झिता ।
कीर्तिताहोबलेनापि स्वग्रंथे पारिजातके ।।५०।।
धीमता हृदयेशेन त्रिवणः समुदीरितः ।
औडुवो मनिहीनोऽथ ग्रंथे हृदयकौतुके ।।५१।।
शुद्धरामक्रियामेले संपूर्णा सांशिका मता ।
त्रावणी पुंडरीकेण ग्रंथे चंद्रोदयाह्वये ।।५२।।
मारवामेलजां केचिदेनां पांशां ब्रुवन्ति हि ।
लक्ष्यमार्गमनुल्लंघ्य बुधः कुर्यात्स्वनिर्णयम् ।।५३।।

यदप्यंगीकृतं किंचिभ्दवेद्रूपं मते सताम् ।

सुव्यक्तनियमाबद्धं नैव दोषास्पदं भवेत् ।। ५४ ।।

देशिकारस्तथा गौरी तृतीया पूर्विरागिणी ।

त्रिवेण्यामत्र संयुक्ता इति लक्ष्यविदां मतम् ।। ५५ ।। [1]

संक्षिप्त अर्थ :

पूर्वी मेल से उत्पन्न रागिणी त्रिवेणी सुप्रसिद्ध है । इसके आरोह व अवरोह मे मध्यम वर्जित है । इसमे वादि स्वर ऋषभ तथा संवादि स्वर पंचम है । गायन समय संध्याकाल है । यह राग श्री अंग से गाया जाता है, अतः विद्वानो ने इसमे ऋषभ का वादित्व उपयुक्त माना है । मध्यम स्वर वर्जित होने के कारण इसमे गंधार और पंचम की संगति का प्रयोग स्वाभाविक रूप से किया जाता है । अवरोह मे इस रागिणी का स्वरूप आकर्षक प्रतित होता है । अहोबल ने अपने ग्रंथ संगीतपारिजात मे त्रिवेणी को गौरीमेल से उत्पन्न मध्यम वर्जित रागिणी बताया है ।

हृदयनारायण देव ने अपने ग्रंथ हृदय कौतुक मे त्रिवण नामक राग का उल्लेख किया है, जो मध्यम, निषाद रहित औडव जाति का राग है। पुंडरिक विठ्ठल ने सदराग चंद्रोदय ग्रंथ मे त्रावणी को शुद्ध रामक्रियामेल जन्य, संपूर्ण, षड्ज वादि रागिणी बताया है । कुछ विद्वानों ने त्रिवेणी को मारवा मेल उत्पन्न पंचम वादि रागिणी बताया है। विद्वानो के मतानुसार सुस्पष्ट नियमो से युक्त जो कोई भी रूप स्वीकृत किया जाता है वह दोषयुक्त नही माना जाना चाहिए । देशकार, गौरी तथा पूर्वी इन तीन रागिणीयों का मिश्रण त्रिवेणी मे किया गया है, ऐसा विद्वानो का मत है ।

४.८.१. राग त्रिवेणी के संबंध मे विद्वानो के मत

१. पंडित विष्णु नारायण भातखंडे जी का मत

इस राग को "तिरबन" भी कहां जाता है । यह "त्रिवेणी" का अपभृंश समझा जा सकता है । इस राग की जाति षाडव है । इस राग मे मध्यम वर्जित है, परन्तु मध्यम दुर्बल

1. भातखंडे, विष्णु नारायण/श्रीमल्लक्ष्यसंगीतम्/पृ. १२६

रखते हुए, इसे सम्पूर्ण जाति मे भी गाया जाता है ।

पंडित भातखंडे जी के अनुसार इस राग मे श्री अंग का प्रयोग होता है । इस राग मे ऋषभ की तुलना मे पंचम पर अधिक ध्यान देना जरुरी है । प्रथमत: श्री अंग दिखाने के लिए :

- सा, रे रे, सा, रे सा, रे ग रे सा, प ग रे सा, नि़ सा रे सा, नि़ ध़ प, नि़ सा, रे, प, प, ध प, ग रे, प ग रे सा, श्रीरांग की छाया अधिक आने पर ग प ग, रे सा, सा रे सा, ग प, प, रे ग, प ग रे सा इन स्वर संगतियों का प्रयोग किया जाता है । उत्तरांग मे नि रें, नि ध प, सां नि ध प का प्रयोग किया जाता है । इसमे भी श्री राग की छाया अधिक पडने पर ध नि ध प, प ग, नि ध रें नि ध प, ध, नि सां नि ध प ग, प ग, रे, प ग, रे सा इस प्रकार श्री से इसे अलग किया जाता है । इस राग मे नि़ रे ग, रे ग, रे रे, सा, नि़ रे सा, ग प ग रे, ध प ग रे ग रे सा- यह स्वर संगतियाँ महत्वपूर्ण है । [1]

२. डॉ. श्रीमति वैजयंती जोशी जी का मत

त्रिवेणी राग मे तीन अलग अलग रागो के अंग है । तीनो रागो कि छाया गाते समय दिखाना इस राग मे आवश्यक है । जिस प्रकार पटमंजीरि मे पांच रागो का समूह है और खटराग मे छह रागो का समूह मे उसी प्रकार त्रिवेणी भी तीन रागो का समूह माना जाता है ।

इस राग के संदर्भ मे अलग अलग मत प्रचलित है, जो इस प्रकार है :

१) प्रथम मतानुसार त्रिवेणी मे श्री, जैत, और विभास इन तीन रागो का मिश्रण माना गया है ।

स्वरूप = सा ग ग प (जैत), प ध प ग रे सा (विभाज), सा ग ग प, प ध प, नि ध प, रें नि ध प (श्री), ग प ध प ग रे सा (विभास)

२) द्वितीय मतानुसार : ऐसा माना जाता है कि श्री, जैत यह सायंगेय राग है, इसलिए तिसरा राग विभास न मानते हुए रेवा माना जाए । रेवा मे ऋषभ पर ठहराव है और

1. भातखंडे, विष्णु नारायण/हिंदुस्थानी संगीत पद्धती/पृ. १२३,१२४

वह इसका महत्त्वपूर्ण स्वर है उसी तरह त्रिवेणी मे इसका प्रयोग करना चाहिए । त्रिवेणी मे श्री, जैत और रेवा का मिश्रण करने से उसे सायंगेयत्व प्राप्त होगा ।

स्वरूप = सा ग ग प, प ध प, प नि सां रें, नि ध प, प ध प ग रे, ग प ध प ग रे, प ग रे, सा ग ग प, प ध प ग रे, प नि सां रें, नि ध प, ध प ग रे, ग रे सा

३) तृतीयमतानुसार इस राग मे श्री, जैत और मारवा इन तीनो रागो का मिश्रण किया जाता है । इसलिए इस मतानुसार त्रिवेणी मे दोनो धैवत और तीव्र मध्यम का प्रयोग किया जाता है ।

स्वरूप = सा रे सा, ग रे सा, ऩि रे ऩि ध, ऩि रे सा, रे रे प, रे ग रे सा, सा ग ग प, प, म॑ ध – म॑ ग, रे ग रे सा, सा प, ग प, प सां, गं रें सां, नि रें नि ध प, प म॑ ध – म॑ ग रे, ग रे सा, प ग रे ग म॑ ध – म॑ ग रे, ग रे सा, सा ग ग प, प नि सां रें – नि ध प, प ध प ग रे, ग रे सा, सा ग ग प (जैत) प म॑ ध – म॑ ग, रे ग रे सा (श्री) ग म॑ ध – म॑ ग रे (मारवा) रे ग रे सा [1]

४.८.२. राग त्रिवेणी का स्वर विस्तार एवं रागांग पूर्वी का विश्लेषण

१. स्वर विस्तार (पंडित भातखंडेजी, क्रमिक पुस्तक मालिका)

१) सा रे सा, सा रे ग रे सा, ऩि रे ग रे ग प ग रे सा

२) सा सा रे रे सा, ग ग रे रे सा, प, प ग रे, ग प ग रे सा, रे रे प, प ध प, ग रे, ग प, नि ध प, ग रे ग प ग रे सा, सा सा रे रे सा सा, ग प ग रे – ग रे सा

३) प प ध ध प प, नि रें नि ध प प, सां सां नि ध प, ग रे ग रे सा

४) रे रे प, प, नि ध नि ध प, सां सां रें नि ध प, नि नि ध ध प प, प ध प प ग रे ग प ग रे सा

५) प प ग रे ग प सां, सां रें सां, रें गं रें सां, रें नि ध नि ध प, प ध प, ग ग, रें नि ध नि ध प, प प ग रे ग प ग रे ग रे सा [2]

---

1. जोशी, वैजयंती र./रागमंथन/पृ. २४,२५
2. भातखंडे, विष्णु नारायण/क्रमिक पुस्तक मालिका /पृ. ५१७

४.८.३. राग त्रिवेणी कि बंदिशे एवं रागांग पूर्वी का विश्लेषण

१. कालिंदि सरसुती (क्रमिक पुस्तक मालिका)

ताल : झपताल

स्थायी : कालिंदि सरसुती अरून बरन देवि

उजले बरन तुहि गंगा त्रिवेनि

अंतरा : बेनी प्रकाश से कटत दुख द्वंद

खंजन मीन लिये संग त्रिवेनि [1]

स्थायी

(सा)रे	-	रे	-	रे	ग	रे	रे	सा	-
का	ऽ	लिं	ऽ	दि	स	र	सु	ती	ऽ
x		2			०		3		
(ग)रे	रे	रे	-	रे	ग	प	ग	रे	सा
अ	रू	न	ऽ	ब	र	न	दे	ऽ	वि
x		2			०		3		
(सा)रे	रे	(रे)प	-	प	(ध)प	प	ध	-	प
उ	ज	ले	ऽ	ब	र	न	तू	ऽ	हि
x		2			०		3		
(प)सां	-	(ध)प	ग	प	ग	-	रे	-	सा
गं	ऽ	गा	ऽ	त्रि	बे	ऽ	ऽ	ऽ	नि
x		2			०		3		

1. भातखंडे, विष्णु नारायण/क्रमिक पुस्तक मालिका/पृ. ४३३

अंतरा

म॑									
प	–	सां	–	सां	सां	–	सां	–	सां
बे	ऽ	नी	ऽ	प्र	का	ऽ	से	ऽ	क
x		2			o		3		
नि	रें	गं	रें	सां	सां	–	नि	ध	प
ट	त	दु	ऽ	ख	द्वं	ऽ	ऽ	ऽ	द
x		2			o		3		
नि़		प							
सा	–	ग	प	प	प	–	प	ध	प
खं	ऽ	ज	ऽ	न	मी	ऽ	न	लि	ये
x		2			o		3		
प		ध			प				
सां	–	प	ग	प	ग	–	रे	–	सा
सं	ऽ	ग	ऽ	त्रि	वे	ऽ	ऽ	ऽ	नि
x		2			o		3		

विश्लेषण :

त्रिवेणी यह मुलतः श्री अंग का राग है और इसे श्री अंग से हि गाया बजाया जाता है । श्री अंग कि स्वरसंगतियों का संबंध पूर्वी रागांग से है क्योंकि श्री राग कि उत्पत्ति पूर्वी थाट से मानी गई है । उपरोक्त स्वर विस्तार मे ऐसी स्वर संगतियों जीसे हम पूर्वी रागांग से संबंधीत मान सकते है इसका विश्लेषण किया जाएगा ।

इस स्वर विस्तार मे नि रे ग रे, प ध प, नि ध प यह स्वर संगतियाँ पूर्वी रागांग सुचक मानी जा सकती है । नि रें नि ध प इस स्वर संगति का प्रयोग पूर्वी और श्री दोनो रागों मे किया जाता है । इस स्वर विस्तार मे जैत, श्री और रेवा या विभास राग का मिश्रण दिखाई देता है । श्री राग का मुल स्त्रोत पूर्वी थाट है इसी कारण कुछ स्वर संगतियाँ पूर्वी रागांग सुचक है ।

इस राग कि प्रसिद्ध बंदिश कालिंदी सरसती कि स्वरलिपी का अध्ययन करने पर इस राग कि स्वर संगतियों द्वारा राग का स्वरूप अधिक स्पष्ट होता है । इस बंदिस कि

स्वरलिपी मे सा रे रे ग (श्री), ग प ग (जैत) ग रे रे प (श्री व रेवा) प ध – प (पूर्वी, श्री व रेवा), सां – प ग प (जैत) इस प्रकार अलग अलग रागों कि छाया दिखाई देती है । इस बंदिश के अंतरे कि स्वरलिपी मे प – सां – सां (जैत) नि रें गं रें सां (पूर्वी व श्री) सां – नि ध प (पूर्वी व श्री) सा – ग ग प (जैत) प – प ध प (पूर्वी व रेवा) सां – प ग प (जैत) इन अलग अलग स्वर संगतियों से पूर्वी, श्री, रेवा और जैत रागों का मिश्रण इस स्वरलिपी मे दिखाई देता है ।

२. तूवै अवतार लिये (पं. रांतनजनकर)

ताल : त्रिताल

स्थायी : तूवै अवतार लिये जग-तारन

राम कृष्ण घन नील सुन्दर दोऊ

कृपासिन्धु दुखियन हित कारन ।

अंतरा : उध-यो पाथर चरण स्परश ते

ग्वाल बाल गोपी जन उधरे

कष्ट किये अत पतित उद्धारन ।। [1]

स्थायी

(रे)ग	रे	सा	–	(नि़)रे	–	सा,	सा	(नि़)सा	प	(म॑)प	ध	प	गप	गरे	सा
तू	वै	औ	ऽ	ता	ऽ	र,	लि	ये	ऽ	ज	ग	ता	ऽऽ	रऽ	न
3				x				2				o			
(सां)नि	रें	नि	ध	प	ध	(म॑)प	प	(प)रे	–	रे,	(रे)ग	(ग)रे	रे	सा	सा
रा	ऽ	म	कृ	ऽ	ष्ण	घ	न	नी	ऽ	ल,	सु	न्द	र	दो	ऊ
3				x				2				o			
(नि)सा	सा	सां	नि	ध	प,	(प)रे	रे	(प)ग	प	ध	प	ग	रे	सा	सा;
कृ	पा	ऽ	सि	ऽ	न्धु,	दु	खि	य	न	हि	त	का	ऽ	र	न;
3				x				2				o			

1. रातंजनकर, श्रीकृष्ण नारायण/अभिनवगीतमंजरी/पृ. १६

अंतरा

ग	ग			सा				नि			नि	नि			
रे	रे	सा	-	सां	-	सां	सां	सां	सां	सां	सां	रें	नि	ध	प
उ	ध	-यो	ऽ	पा	ऽ	थ	र	च	र	ण	प	र	स	ते	ऽ
3				x				2				o			
नि			पं					नि				नि			
सां	-	रें	गं	पं	गं	रें	सां	सां	-	नि	ध	रें	नि	ध	प
ग्वा	ऽ	ल	बा	ऽ	ल	गो	ऽ	पी	ऽ	ज	न	उ	ध	रे	ऽ
3				x				2				o			
ग				म॑		नि					ग				
रे	-	ग	प	प	ध	रें	नि	ध	प	ग,	प	ग	रे	सा	सा;
क	ऽ	ष्ट	कि	ये	ऽ	अ	त	प	ति	त,	उ	द्धा	ऽ	र	न;
3				x				2				o			

विश्लेषण :

यह बंदिश भगवान श्री राम और श्री कृष्ण कि महिमा का वर्णन इस विषय पर रची गई है । राग कि प्रकृति को ध्यान मे रखते हुए भक्तिमय वातावरण कि निर्मिती इस बंदिश द्वारा संभव है । इस बंदिश कि स्वरलिपी के सुक्ष्म अध्ययन से रागांग पूर्वी, श्री और जैत कि स्वर संगतियों का प्रयोग दिखाई देता है । इस बंदिश से प्राप्त प्रमुख स्वर संगितयाँ इस प्रकार है :

- सा प पम॑ ध प (रागांग पूर्वी और श्री), ग प ग रे (जैत)
- नि रें नि ध प (रागांग पूर्वी और श्री), प रे – रे रे ग ग रे रे (श्री)
- नि ध प (रागांग पूर्वी और श्री), ग प ध प (जैत)
- सा रे नि ध प (रागांग पूर्वी और श्री), ग प प ध, ग प ग रे (जैत)

इस प्रकार पूर्वी, श्री और जैत इन तीनो रागों के दर्शन इस स्वरलिपी से हमे होते है ।

४.९ राग रेवा – श्री मल्लक्ष्यसंगीतम् मे प्राप्त विवरण :

रेवा

पूर्वीमेलसमुत्पन्ना ख्याता रेवा गुणिप्रिया ।

आरोहे चावरोहेऽपि मनिहीनैव संमता ।।८६।।

–यंशिका गांशिका वासौ सायंगेया बुधैर्मता ।

वर्जने निमयोः सिद्धा गपयोः संगतिः स्वयम् ।।८७।।

उत्तरांगप्रधानत्वे विभासांगं भवेत्स्फुटम् ।

निमयोर्यत्परित्यागस्तद्रागेऽपि सुसंमतः ।।८८।।

गौरीमेलसमुत्पन्ना विदुषाहोबलेन सा ।

मानित्यक्तोदिता रेवा गपादियमलस्वरा ।।८९।।

रिग्रहो रेवगुप्तिश्च रिन्यासो मनिवर्जितः ।

औडुवश्चरमे यामे दिनस्योक्तः कलानिधौ ।।९०।।

रागलक्षणके ग्रंथे रेवगुप्तिः प्रकीर्तित : ।

मायामालवमेलाख्ये औडुवो मनिवर्जितः ।।९१।।

रागतरंगिणीग्रंथे लोचनेनापि कीर्तिता ।

रेवाख्या रागिणी तत्र गौरीमेलसमुत्थिता ।।९२।। [1]

संक्षिप्त अर्थ :

गुणीजनो कि प्रिय रागिणी रेवा पूर्वीमेल से उत्पन्न मानी गई है । इसके आरोह व अवरोह मे मध्यम तथा निषाद स्वर वर्जित है । इस राग मे ऋषभ अथवा गंधार को वादि माना गया है, एवं इसका गायन समय सायंकाल है । मध्यम निषाद वर्जित होने के कारण इस राग मे गंधार और पंचम की संगति का प्रयोग किया जात ाहै । रेवा मे उत्तरांग की प्रधानता होने पर विभास अंग स्पष्ट होता है । विभास मे भी मध्यम निषाद वर्जित माने गए है। पंडित अहोबल ने रवा को गौरी मेल से उत्पन्न, मध्यम निषाद वर्जित वर्णित किया है । इस राग मे ग – प आदि युगल स्वर समूह का प्रयोग होता है । कलानिधि नामक ग्रंथ मे दिन

1. भातखंडे, विष्णु नारायण/श्रीमल्लक्ष्यसंगीतम्/पृ. १२९

के अंतिम प्रहर मे गाया जाने वाला रेवगुप्ती नामक राग वर्णित है, जिसमे मध्यम व निषाद वर्जित है, तथा जिसका ग्रह व न्यास स्वर ऋषभ है । राग लक्षण नामक ग्रंथ मे मायामालव (गौळ) मेल के अंतर्गत मध्यम निषाद वर्जित औडव जाति के रेवगुप्ती राग का वर्णन किया है। पंडित लोचन ने भी राग तरंगिणी मे रेवा नामक रागिणी को गौरीमेलजन्य बताया है ।

४.९.१. राग रेवा के संबंध मे पंडित भातखंडे जी का मत

यह एक अप्रचलित राग है । यह भैरव थाट के विभास राग का सायंगेय (जवाब) है ऐसा मत है । इस राग मे मध्यम व निषाद वर्ज्य होने के कारण गंधार व पंचम की संगति अत्यंत मधुर सुनाई देती है । प ग, प ध़, प ग, प ग, इन स्वरो को ऐसी खूबी से गाया जता है कि इसमे सायंगेयत्व दिखाई देता है । यह राग सायंगेय है इसलिए इसमे पूर्वी या श्री अंग इन दोनो में से कोई एक अंग का होने तो आवश्यक है । पंडित भातखंडेजी ने इस राग को पूर्वी अंग के प्रयोग के साथ अनेक बार सुना था । पूर्वी अंग का प्रयोग दिखाने के लिए "ग रे ग" इस टूकडे का प्रयोग बार बार किया जाता है । इस टूकडे मे सायंगेयत्व की सुचना देने का सामर्थ्य है । पंडित भातखंडेजी ने श्री अंग से इस राग को किस प्रकार गाया जाए इसका भी उल्लेख किया है । श्री अंग से रवा का स्वरूप इस प्रकार है :

सा रे रे सा, ग रे, सा, सा, ध़ प़, प़ ध़, रे रे, सा, प ग रे, ग रे, ध प, रे ग, प ध प ग रे, रे सा, सा, रे सा, प ग रे प, प, ध प, ग, ध प, ग, रे ग, रे, रे सा, सा रे सा, सा सा रे रे, ग रे, ध प, ग रे प ग रे, सा, ध़ प़, सा, रे ग, प ध प ग, सां ध प ग, रे प ध प ग रे, रे, सा, सा रे सा

इस राग का विस्तार क्षेत्र मंद्र सप्तक के धैवत से मध्य सप्तक के धैवत तक है । इस राग का मुख्य चलन निम्न रूप से है :

सा रे ग, रे ग प ग, रे सा, प ध प, ग, रे ग, सा रे ग, रे सा,

अंतरे मे उठाव : प ग, प ध प, सां, सां, रें सां, रें गं रें सा, सां रें सा, ध प, प ग, प ध, रें रें सां, सां, ध प ग, रे ग, ध प ग, रे सा [1]

1. भातखंडे, विष्णु नारायण/हिंदुस्थानी संगीत पद्धती/पृ. ९२,९३

४.९.२. राग रेवा का स्वर विस्तार एवं रागांग पूर्वी का विश्लेषण

१. स्वर विस्तार (पंडित भातखंडेजी , क्रमिक पुस्तक मालिका)

रेवा ऋषभ वादि प्रकार :

१) सा रे रे सा, ग रे, सा, सा, ध़ प़, प़ ध़, रे, रे, सा प ग रे

२) ग रे, ध प, रे ग, प ध प ग रे, रे सा, सा, रे सा

३) प ग रे प, प, ध प, ग, ध प, ग, रे ग, रे, रे सा

४) सा रे सा, सा सा रे रे, ग रे, ध प, ग रे ग प ग रे, सा, ध़ प़, सा रे ग, प ध प ग, सां ध प ग, रे प ध प ग रे, सा रे सा

५) प ध प ग रे, प, प, ध ध प, सां रें सां, ध प, ग प ग रे, ध प, रे ग, ध प ग रे, ग रे, सा, रे सा

६) सा सा रे रे, प प ध प, सां रें सां, ध प ग, रे प प ग, रे, ग, सा रे सा, सा, रे सा [1]

विश्लेषण :

यह राग श्री अंग का राग है । इसी कारण श्री अंग कि स्वर संगतीयाँ जैसे सा रे रे सा, रे प का प्रयोग इस स्वर विस्तार मे किया गया है । ध प इस स्वर संगति का मुल हम पूर्वां रागांग से संबंधीत मान सकते है । श्री अंग पर भी पूर्वी रागांग का कही न कही प्रभाव है और रेवा श्री अंग का राग है इस प्रकार हम पूर्वी रागांग का संबंध इस राग से मान सकते है । पूर्वी रागांग वाचक स्वर संगतियों का सीधा प्रयोग इस स्वर विस्तार मे नहि दिखाई देता है ।

४.९.३. राग रेवा कि बंदिशे एवं रागांग पूर्वी का विश्लेषण

१. साँझ समे सुखकर – लक्षणगीत (पंडित रांतनजनकर)

ताल : सुलताल

स्थायी : साँझ समे सुखकर रेवा रूप मधुर
पूरवि मेलहुं सों औडव बिन मनि सुर ।

1. भातखंडे, विष्णु नारायण/क्रमिक पुस्तक मालिका/पृ. ५१९

अंतरा :   अंश गहे गंधार गप संग साधन कर

प्रति मूरत विभास चतुर "सुजन" मनहर ।। [1]

स्थायी

सा						नि़			
ग	-	रे	सा	सा	-	सा	रे	सा	सा ॥
साँ	ऽ	झ	स	मे	ऽ	सु	ख	क	र ॥
x		०		2		3		०	

नि़				ग					
सा	रे	ग	-	प	ग	प	ग	रे	सा
रे	ऽ	वा	ऽ	रू	ऽ	प	म	धु	र
x		०		2		3		०	

नि़									
सा	-	ग	ग	प	-	प	ध	प	- ॥
पू	ऽ	र	वि	मे	ऽ	ल	हुं	सौं	ऽ ॥
x		०		2		3		०	

ग				प					
प	-	ध	प	ग	प	ग	रे	सा	सा
औ	ऽ	ड	व	बि	न	म	नि	सु	र
x		०		2		3		०	

अंतरा

ग						प			
प	-	प	ध	प	-	सां	सां	-	सां ॥
अं	ऽ	श	ग	हे	ऽ	गं	धा	ऽ	र ॥
x		०		2		3		०	

नि़				पं					
सां	सां	रें	सां	गं	पं	गं	रें	सां	सां
ग	प	सं	ग	सा	ऽ	ध	न	क	र
x		०		2		3		०	

नि़		प			प	प			
सा	सा	ग	-	प	रे	ग	प	ध	सां ॥
प्र	ति	म्	ऽ	र	त	वि	भा	ऽ	स ॥
x		०		2		3		०	

ग				प					
रें	सां	ध	प	ग	प	ग	रे	सा	सा
च	तु	र	सु	ज	न	म	न	ह	र
x		०		2		3		०	

1. रातंजनकर, श्रीकृष्ण नारायण/अभिनव गीत मंजरी/पृ. २०

२. माई लोगवा (पंडित रातंजनकर)

ताल : त्रिताल

स्थायी : माई ! लोगवा चर्चा करे,

एसो निपट निठोर कान्ह

अब कौन जतन शरम राखूँ मैं ।

अंतरा : कठिन भयो सखि पनघट को मग,

जमुना तट पर ढीट लंगरवा

मग रोकत नित कासे कहूँ ।। [1]

स्थायी

															(ग)प
															मा
०				3				x				2			
ग	(ग)प	(म॑)ग	रे̱	सा	–	(नि̱)सा	रे̱	सा	–	–	(ग)रे̱	(ग)प	(म॑)ग	–,	(ग)प
ई	लो	ऽ	ग	वा	ऽ	च	र	चा	ऽ	ऽ	क	रे	ऽ	ऽ,	मा
०				3				x				2			
प	(म॑)प	–	प	(म॑)ध̱	प	ग,	(ग)प	(म॑)ग	(ग)रे̱	सा,	(नि̱)सा	–	(नि̱)रे̱,	(नि̱)सा	सा
ई	ऐ	ऽ	सो	नि	प	ट,	नि	ठो	ऽ	र,	का	ऽ	न्ह,	अ	ब
०				3				x				2			
(प)ग	प	ग,	(ग)प	प	प,	(ग)प	(म॑)ध̱	प,	(प)ग	प	ग	(ग)रे̱	सा	–;	(ग)प
कौ	ऽ	न,	ज	त	न,	श	र	म,	रा	ऽ	खूँ	मै	ऽ	ऽ;	मा
०				3				x				2			

1. रातंजनकर श्रीकृष्ण नारायण/अभिनव गीत मंजरी/ पृ. २१

अंतरा

(ग)प	(म॑)ध॒	प,	(नि)सां	सां	–	(नि)सां	सां	(नि)सां	सां	रें॒	रें॒	(रें)गं	रें॒	सां	सां
क	ठि	न,	भ	यो	ऽ	स	खि	प	न	घ	ट	को	ऽ	म	ग
०				3				x				2			
(नि)सां	रें॒	सां	–	(ग)प	(म॑)ध॒	प	प	(ग)प	–	(म॑)ग	(ग)प	ग	रे॒	सा	–
ज	मु	ना	ऽ	त	ट	प	र	ढी	ऽ	ट	लं	ग	र	वा	ऽ
०				3				x				2			
(नि़)सा	सा	(प)ग	–	प	ग	प	प	(प)सां	प	ग,	(ग)प	(म॑)ग	(ग)रे॒	सा;	(ग)प
म	ग	रो	ऽ	क	त	नि	त	का	ऽ	से,	क	हूँ	ऽ	ऽ;	मा
०				3				x				2			
ग	(ग)प	ग	रे॒	सा	–										
ई	लो	ऽ	ग	वा	ऽ										
०				3											

विश्लेषण :

आचार्य श्री कृष्ण नारायण रातंजनकर द्वारा रचित इस लक्षणगीत से इस राग के संबंध मे महत्त्वपूर्ण जानकारी हमे प्राप्त होती है । इस लक्षणगीत का अर्थ इस प्रकार है इस राग का गायन समय संध्याकाल है । इस राग का जन्म पूर्वी थाट से होता है और इसकी जाती ओडव ओडव है । इस राग मे मध्यम निषाद वर्ज है । गंधार इस राग का अंश स्वर है और ग प स्वर संगति इस राग मे महत्त्वपूर्ण है । यह राग विभास राग कि प्रतिकृति है । ऐसा उल्लेख इस लक्षणगीत मे किया गया है ।

मध्यम व निषाद वर्जित होने के कारण पूर्वी रागांग का सीधा प्रयोग इस बंदिश कि स्वरलिपी मे नहि दिखाई देता है । ध॒ प, ग रे॒ सा इन स्वर संगतियों से पूर्वी रागांग के संकेत मान सकते है ।

उदाहरण स्वरूप राग रेवा कि एक और बंदिश का उल्लेख किया गया है । भगवान श्रीकृष्ण और गोपीयों कि लीला का वर्णन इस बंदिश मे किया गया है ।

यह राग श्री अंग से गाया जाता है इसलिए सा - - , रे प , सां रें रें गं का प्रयोग इस बंदिश मे दिखाई देता है । पूर्वी रागांग वाचक स्वर संगतियों का सीधा प्रयोग इस बंदिश कि स्वरलिपी मे नही दिखाई देता है । परंतु ध प, ग रे सा और रें रें गं रें से पूर्वी रागांग का संकेत माना जा सकता है ।

४.१० राग मालवी - श्री मल्लक्ष्यसंगीतम् मे प्राप्त विवरण :

मालवी

पूर्वीमेलसमुत्पन्ना मालवी बहुसंमता ।

आरोहे स्यान्निदौर्बल्यमवरोहे तु धस्य तत् ।।३८।।

श्रीरागांगा यतो गेया वैचित्र्यं रिस्वरे स्फुटम् ।

गानमस्या भवेत्सायं सर्वरक्तिप्रदायकम् ।।३९।।

ऋषभः संमतो वादी संवादी पंचमो भवेत् ।

संगतिर्गपयोश्चात्र भवेद्वैचित्र्यकारिणी ।।४०।।

अपूर्व रूपकं त्वेतल्लक्ष्यज्ञैरनुशासितम् ।

रंजकं संमतं यस्माङ्ग्दामेव मनीषिणाम् ।।४१।।

रागलक्षणके ग्रंथे मालवी रागिणी मता ।

कांभोजीमेलसंभूता वक्ररूपा तथैव च ।।४२।।

ग्रंथे सारामृते प्रोक्ता रागिणीयं धगोज्झिता ।

मेले मालवगौळीये सायंगेयाऽथ सांशिका ।।४३।। [1]

संक्षिप्त अर्थ :

पूर्वी मेल से उत्पन्न राग मालवी के आरोह मे निषाद तथा अवरोह मे धैवत का अलपत्व माना गया है । यह रागिणी श्री अंगयुक्त होने के कारण इसमे ऋषभ स्वर का वैचित्र्य स्पष्ट है । सायंकाल मे इसका गायन रंजक प्रतित होता है । इस राग मे ऋषभ स्वर वादी व पंचम संवादि है । गंधार और पंचम की संगति इस राग मे वैचित्र्य उत्पन्न

1. भातखंडे, विष्णु नारायण/श्रीमल्लक्ष्यसंगीतम्/पृ. १२५

करती है । अपने अद्भूत रंजकत्व गुण के कारण मालवी अपूर्व एवं विद्वानो को सदैव प्रिय प्रतीत होती है । राग लक्षण नामक ग्रंथ मे मालवी को काम्भोजी मेल जन्य माना गया है, और इसका स्वरूप वक्र माना गया है । इसी प्रकार संगीतसारामृत ग्रंथ मे इसे मालवगौडमेल से उत्पन्न, धैवत गंधार वर्जित तथा षड्ज वादि युक्त सायंकालिन रागिणी बताया गया है ।

४.१०.१. राग मालवी के संबंध मे पंडित भातखंडे जी का मत

यह एक अप्रचलित राग है । ग्रंथो मे जो मालवी राग का वर्णन है और जो प्रचलित स्वरूप है उसमे काफी भिन्नता है । पूर्वी में दोनो मध्यम का प्रयोग किया जाता है, परन्तु मालवी मे केवल तीव्र मध्यम का प्रयोग किया जाता है । निषाद का प्रयोग अवरोह मे किया जाता है । इस राग को श्री राग की रागिणी माना गया है, और उसे श्री अंग से ही गाना बजाना चाहिए ऐसा भातखंडेजी का मत है । इस राग मे पूर्वांग प्रबल है ।

इस राग के प्रस्तुतीकरण के लिए कुछ युक्तियाँ पंडित भातखंडे जी ने बताई है:

प्रथम इस राग की शुरूआत करते समय श्री राग का थोडा विस्तार करना चाहिए । बाद मे बीच बीच मे आरोह मे गंधार का प्रयोग करना चाहिए । इससे यह राग श्री का एक प्रकार दिखाई देने लगेगा ।

उदाहरण : रे, रे, सा, ग, ग, प ग, रे, सा, सा रे, सा, नि प म ध, रे , सा, रे ग, म ग, प म ग, प ग, रे रे सा, ग, म ध, सां, सां, नि प ग, प ग, म ग रे, सा, प म ग प ग रे, सा, सा रे, सा, ग, म प, सां, सां नि प ग म ग, रे, सा, सा, रे ग, म ध सा, प ग, म ग रे, सा [1]

---

1. भातखंडे, विष्णु नारायण/हिंदुस्थानी संगीत पद्धती/पृ. १०८,११०

४.१०.२. राग मालवी का स्वर विस्तार एवं रागांग पूर्वी का विश्लेषण

१. स्वर विस्तार (पंडित भातखंडेजी, हिन्दूस्तानी संगीत पद्धति)

– प ग, रे, रे, सा सा रे सा, ग, म॑ ग, रे ग, म॑ ध, रें, सां, सां, नि प, ग, ग म॑ ग, रे सां, सा रे सा ।

– रे रे सा, रे रे ग रे सा, प प ग रे ग म॑ ग रे, सा, सा रे ग, म॑ ग, म॑ ध सां, रें गं रें सां, रें सां, सां नि प, म॑ ध रें सां, नि प, ग, प ग, रे सा, सा रे सा ।

– सा सा ग रे सा, रे ग, प ग, नि प ग, रे ग, रें सां नि प ग, रे ग, म॑ ग, म॑ प, प ग रे सा, सा ग, म॑ ध, रें सां नि प म॑ ग, रे ग म॑ प, म॑ ग, रे, रे, सा ।

– ग ग, म॑ ग, रे सा, प म॑ ग, प ग, रे, सा, सा रे सा, रे ग रे, म॑ ग रे, प म॑ ग रे, रे सा, सा ग, म॑ ध सां, सां नि प, म॑ ग, रे ग, प ग, रे, सा, सा रे सा । [1]

विश्लेषण :

यह राग श्री अंग से गाया बजाया जाता है । पूर्वी रागांग कि स्वर संगतियों का सीधा प्रयोग इस उपरोक्त स्वर विस्तार मे नही दिखाई देता है । परंतु म॑ ध सां, म॑ ध रें सां, म॑ ग, रे ग म॑ प से पूर्वी का संकेत प्राप्त होता है । इस प्रकार सुक्ष्म रूप से इस राग का संबंध पूर्वी रागांग से माना जा सकता है । "उठ नमन कर ले प्यारे" उदाहरण स्वरूप दि गई इस बंदिश मे इस राग के संबंध मे उपरोक्त तथ्य सिद्ध होते है ।

४.१०.३. राग मालवी कि बंदिशे एवं रागांग पूर्वी का विश्लेषण

१. उठ नमन कर ले (क्रमिक पुस्तक मालिका)

ताल : त्रिताल

स्थायी : उठ नमन कर ले प्यारे, दिनकर अस्ता चलते सिधारे

अंतरा : कंचन मंडित सेरा सुसोहत, दिव्य पुष्प गल माल बिराजे [2]

1. भातखंडे, विष्णु नारायण/हिंदुस्थानी संगीत पद्धती/पृ. ११९
1. भातखंडे, विष्णु नारायण/क्रमिक पुस्तक मालिका/पृ. ४४४

स्थायी

सा							गम॑					नि़	सा		
सां	-	-	पप	म॑	ग	-	पप	ग	-	रे॒	सा	सां	रे॒	सा	-
ऊ	ऽ	ऽ	ठन	म	न	ऽ	कर	ले	ऽ	ऽ	ऽ	प्या	ऽ	रे	ऽ
०				3				x				2			
नि़		म॑		ध॒				नि			नि	रें॒		ध॒	
सा	सा	ग	ग	म॑	ध॒	सां	-	सां	सां	सां	सां	नि	-	म॑	ध॒
दि	न	क	र	अ	ऽ	स्ता	ऽ	च	ल	तें	सि	धा	ऽ	रे	ऽ
०				3				x				2			

अंतरा

म॑		ध॒		नि़								नि़			
ग	-	म॑	ध॒	सां	-	सां	सां	सां	-	सां	सां	सां	रें॒	सां	सां
कं	ऽ	च	न	मं	ऽ	डि	त	से	ऽ	रा	सु	सो	ह	ऽ	त
०				3				x				2			
सां		रें॒						नि			नि	रें॒		ध॒	
रें॒	-	गं	गं	-	रें॒	सां	सां	सां	-	सां	सां	नि	-	म॑	ध॒
दि	ऽ	व्य	पु	ऽ	ष्प	ग	ल	मा	ऽ	ल	बि	रा	ऽ	जे	ऽ
०				3				x				2			

२. **नमो नमो नमो नारायण (पंडित रातंनजनकर)**

ताल : त्रिताल

स्थायी : नमो नमो नमो नारायण, सकल जगत के तुम बिस्तारन ।

अंतरा : नाम लेत नित जनम सुधारन, परम पवित्र पतित उद्धारन ।। [1]

स्थायी

नि			म॑			ग		म॑			गं				
सां	सां	प	प	ग	रे॒ग	प	प	प	ग	-	प	ग	रे॒	सा	-
न	मो	ऽ	न	मो	ऽऽ	न	मो	ना	ऽ	ऽ	रा	ऽ	य	ण	ऽ
०				3				x				2			
नि़		म॑	म॑	ध॒	म॑	ध॒		नि			नि				म॑
सा	सा	ग	ग	म॑	ध॒	सां	-	सां	सां	सां	सां	रें॒	नि	म॑	ध॒
स	क	ल	ज	ग	त	के	ऽ	तु	म	बि	स्ता	ऽ	र	न	ऽ
०				3				x				2			

1. रातंजनकर, श्रीकृष्ण नारायण/अभिनव गीत मंजरी/पृ. २२

<u>अंतरा</u>

ध॒		म॑	ध॒					नि			नि				
म॑	-	ध॒	सां	-	सां	सां	सां	सां	सां	सां	सां	रें॒	-	सां	सां
ना	ऽ	म	ले	ऽ	त	नि	त	ज	न	म	सु	धा	ऽ	र	न
o				3				x				2			
नि			गं					नि			गं				
सां	सां	गं	मं	गं	रें॒	सां	सां	सां	सां	पग	प	ग	रे॒	सा	सा
प	र	म	प	वि	ऽ	ऽ	त्र	प	ति	तऽ	उ	द्धा	ऽ	र	न
o				3				x				2			

विश्लेषण :

इस बंदिश के शब्द भगवान श्री विष्णु कि महिमा का वर्णन करते हुए भक्तिमय वातावरण कि निर्मिती करने मे समर्थ है । राग मालवी के अपने अलग स्वरूप को स्पष्ट करते हुए पूर्वी रागांग वाचक कुछ स्वरसंगतियों का प्रयोग इस बंदिश कि स्वर लिपी मे दिखाई देता है । म॑ ध॒ सां, सां रें॒ नि इन स्वर संगतियों का संबंध पूर्वी रागांग से माना जा सकता है ।

४.११. राग विभास : विद्वानो के मत

१. डॉ. श्रीमति वैजयंती जोशी का मत

विभास राग तीन प्रकार से गाया जाता है ।

१) भैरव थाट का विभास जिसमे रे॒ ध॒ कोमल व म नि वर्ज्य है ।

२) मारवा थाट का विभास, जिसमे रे॒ कोमल ध शुद्ध व म तथा नि वर्ज्य है ।

३) पूर्वी थाट का विभास, जिसमे तीव्र मध्यम कोमल धैवत और शुद्ध निषाद का प्रयोग किया जाता है । भैरव व मारवा थाट के विभास का चलन देसकार अंग से किया जाता है । पूर्वी थाट के विभाज मे तीव्र मध्यम व निषाद को प्रधानता न देते हुए एक विशिष्ट प्रकार से प्रयोग किए जाता है । एक अन्य मतानुसार मारवा थाट के विभास मे भी कभी कभी कुछ बंदिशो मे शुद्ध निषाद व तीव्र मध्यम का प्रयोग दिखाई देता है ।

स्वरूप :

- सा, ग प, प म॑ ध, नि ध प, प ध सां – निध प, म॑ ध प, प म॑ ध – म॑ धनि ध – प, सां निध – प, म॑ ध – पग रे, सा, गप, म॑ ध, ग प, प ध सां, निध प, ध– प ग रे सा [1]

२. पंडित भातखंडे जी का मत

पंडित भातखंडे जी के अनुसार पूर्वी थाट से उत्पन्न होनेवाला राग विभास यह अप्रचलित राग है । इस राग कि जाति संपूर्ण है और इस मे मध्यम और निषाद का अल्प प्रयोग किया जाता है । यह उत्तरांग प्रधान राग है और धैवत स्वर वादि और ऋषभ संवादी है। पंचम स्वर पर न्यास करने से यह राग अधिक स्पष्ट होता है ।

४.११.१. राग विभास का स्वर विस्तार एवं रागांग पूर्वी का विश्लेषण

१. स्वर विस्तार (पंडित भातखंडेजी, क्रमिक पुस्तक मालिका)

- सा, ध, प, म॑ प ध, प , ग प ग रे सा, सा रे सा, ग प, म॑ ध प, ध सां, ध नि ध प, ग प ग ध प ग रे सा
- सा, ग रे सा, प ग प ग रे सा, सा रे ग प, म॑ ध नि ध प, ध सां, ध प, ग प ध नि ध, प, ध प ग रे सा
- सा, प, ग प, ध प, रे ग प, म॑ प ध, रें सां, ध नि ध प, नि ध प ग, प म॑ ध प ग, प ग रे सा
- सा, ग, प ग, ध , प, रे ग, नि ध प, ध रें सां, ध प, सां नि ध प, म॑ ध प, ग प, ग रे सा
- सा, ध, ध प, ग प ध सां, रें नि ध प, गं रें सां, मं गं, पं गं रें सां, ध सां रें गं रें सां, प ध सां, ध नि ध प, ग प ध, म॑ ध, प, रे ग ध प, ग प ग रे सा [2]

1. जोशी, वैजयंती र./राग मंथन/पृ. २३,२४
1. भातखंडे, विष्णु नारायण/क्रमिक पुस्तक मालिका/पृ. ४४६,५२२

विश्लेषण :

इस स्वर विस्तार मे पूर्वी रागांग वाचक स्वर संगितयों का सीधा प्रयोग नही किया गया है । निम्न स्वर संगतियों को सुक्ष्म रूप से पूर्वी रागांग से संबंधित मना सकते है।

१) ध नि ध प　　　२) म ध नि ध प　　　३) रें नि ध प

४.११.२. राग विभास कि बंदिश एवं रागांग पूर्वी का विश्लेषण

१. राग विभास चतुर (लक्षणगीत – क्रमिक पुस्तक मालिका)

ताल : झपताल

स्थायी : राग विभास चतुर कामवरधनी के सूर
गावत गुनीजन संपूरन मनीदुरबल

अंतरा : अवरोह मे म तजत आरोह अनी कहत
पंचम मुकाम है पावत अनंद तब [1]

स्थायी

ध	ध	प	ध	प	ग	प	ग	रे	सा
रा	ऽ	ग	वि	भा	ऽ	स	च	तु	र
x		2			o		3		
सा	रे	सा	ग	प	ध	ध	नि	ध	प
का	ऽ	म	व	र	ध	नि	के	सु	र
x		2			o		3		
प	ग	प	ध	सां	रें	सां	नि	ध	प
गा	ऽ	व	त	गु	नि	ज	न	सं	ऽ
x		2			o		3		
सां	ध	नि	ध	प	ध	प	ग	रे	सा
पू	ऽ	र	न	म	नि	दु	र	ब	ल
x		2			o		3		

1. भातखंडे, विष्णु नारायण/क्रमिक पुस्तक मालिका/पृ. ४४७

अंतरा

प	म॑	ग	प	ध	सां	सां	सां	रें	सां
अ	व	रो	ऽ	ह	में	म	त	ज	त
x		2			०		3		
सां	रें	सां	गं	रें	सां	-	नि	ध	प
आ	ऽ	रो	ऽ	ह	अ	नि	क	ह	त
x		2			०		3		
ध	ध	रें	रें	सां	रें	सां	नि	ध	प
पं	ऽ	च	म	मु	का	ऽ	म	है	ऽ
x		2			०		3		
सां	ध	नि	ध	प	ध	प	ग	रे	सा
पा	ऽ	व	त	अ	नं	ऽ	द	त	ब
x		2			०		3		

विश्लेषण :

इस बंदिश कि स्वरलिपी के अध्ययन से स्पष्ट है कि इस मे पूर्वी रागांग वाचक स्वरसंगतियों का प्रयोग नहि किया गया है ।

ध प एवम् नि ध प

इन स्वर संगतियों को पूर्वी रागांग से सुक्ष्म रूप से संबंधित मान सकते है ।

४.१२ राग टंकी - श्री मल्लक्ष्यसंगीतम् मे प्राप्त विवरण :

टंकी

पूर्वीमेले सुविख्याता रागिणी टकिका मता ।
भार्या प्रकीर्तीता लोके श्रीरागस्यैव पांशिका ।।५६।।
श्रीरागांगेन सा लक्ष्ये यतः सर्वत्र गीयते ।
गानं चाभिमतं नित्यं सायंकाले प्रतिष्ठितम् ।।५७।।

मालवी त्रिवणा गौरी पूर्वी टंकी तथैव च ।

मता एता बुधैः पंच श्रीरागस्य वरांगना : ।।५८।।

महीनामथवा पूर्णामेनां गायन्ति गायकाः ।

त्रिवेण्यामृषभो वादी ह्यतस्तस्या भिदा स्फुटा ।।५९।।

वादिभेदाद्रागभेद इति लक्ष्यविदां मतम् ।

सर्वत्रैव प्रसिद्धं स्यान्महद्वैचित्र्यकारणम् ।।६०।।

गौरीमेलसमुद्भता सायंगेयाऽथ सांशिका ।

कीर्तिता पुंडरीकेण ग्रंथे मंजुरिनाकमे ।।६१।।

पूर्वीश्रीकानडारागैः सह भैरवमेलनात् ।

टंकः प्रवर्तते लक्ष्ये लोचनेन प्रकीर्तितम् ।।६२।।

रागबोधे मतष्टकः सांशन्यासग्रहो ध्रुवम् ।

वसंतमेलने सायं सोमनाथेन धीमता ।।६३।। [1]

संक्षिप्त अर्थ :

प्रसिद्ध रागिणी टंकी (टंकिका) को पूर्वीमेल से उत्पन्न माना गया है । पंचम वादि इस रागिणी को श्री राग की भार्या (स्त्री) माना गया है । यह रागिणी श्री अंग से गायी जाती है । जिसका गायन समय सायंकाल है । विद्वानों ने मालवी त्रिवणा, गौरी, पूर्वी और टंकी इन पांच रागिणीयों को श्री राग की स्त्रीयाँ माना गया है । संगीतज्ञ इसे मध्यम वर्जित अथवा संपूर्ण दोनो तरह से गाते है । त्रिवेणी मे वादि स्वर ऋषभ होने के कारण टंकी से उसका स्वरूप अलग हो जाता है । विद्वानो के मतानुसार वादि की भिन्नता से राग भिन्नता व्यक्त होती है । यह अत्यंत ही अद्‌भूत एवं सुप्रसिद्ध तथ्य है । पुंडरिक विठ्ठल ने रागमंजिरी नामक ग्रंथ मे इसे गौरी मेलजन्य षड्ज वादि सायंगेय रागिणी कहाँ है । लोचन के अनुसार पूर्वी, श्री, तथा कान्हडा रागो के साथ ही टंकी राग भी भैरवमेलजन्य है । सोमनाथ द्वारा राग विबोध मे प्रतिपादित मत के अनुसार बसंतमेल से उत्पन्न सायंगेय राग टक्क मे षड्ज स्वर ग्रह, अंश और न्यास है ।

1. भातखंडे, विष्णु नारायण/श्रीमल्लक्ष्यसंगीतम्/पृ. १२६

४.१२.१. राग टंकी का स्वर विस्तार एवं रागांग पूर्वी का विश्लेषण

१. स्वर विस्तार (पंडित भातखंडेजी, क्रमिक पुस्तक मालिका)

- प ग रे सा, रे, ग रे, ग प, प ध प, ध मं ग, रे, ग प, ग रे सा
- सा, ग रे, प, ग प, ध प, ग प ग रे, ध प, मं ग, रे ग, प, नि ध प, ग प, रें नि ध प, ग प, ग रे मं ग रे, सा
- प, ग प, ध प, नि ध प, नि रें नि ध प, ध मं ग, नि ध प, ग रे, प ग प, ग रे, नि रे, सा
- ग, प ध, प सां, नि रें सां, सां रें गं पं, गं रें सां, नि सां, रें, नि ध , प , रे ग प ध, रें नि ध प, मं ग, ग प, ग रे, प ग रे, रे सा [1]

विश्लेषण :

यह श्री अंग का राग है परंतु पूर्वी रागांग से संबंधीत कुछ स्वर संगतियाँ जैसे प ध प, रें नि ध प, नि ध प, नि रें सां और नि रें नि ध प का प्रयोग दिखाई देता है । इस राग कि निम्न बंदिश मे भी पूर्वी रागांग कि स्वर संगतियों का सीधा प्रयोग नही हुआ है । परंतु श्री अंग रे सा, सा रे सा, रे – ग ग का आभास दिखाई देता है ।

बंदिश हरि हरि कर मन जग मै

४.१२.२. राग टंकी कि बंदिश

१. हरि हरि कर मन (क्रमिक पुस्तक मालिका)

ताल : त्रिताल

स्थायी : हरि हरि कर मन जग में जीवन है दिन चार

अंतरा : गुमाई घरी पाछी नहिं आवे हर रंग कर ले बिचार [2]

---

1. भातखंडे, विष्णु नारायण/क्रमिक पुस्तक मालिका/पृ. ५१८
1. भातखंडे, विष्णु नारायण/क्रमिक पुस्तक मालिका/पृ. ४३९

स्थायी

(सा)रे॒	रे॒	रे॒	रे॒	(ग)रे॒	रे॒	सा	सा	(नि़)सा	रे॒	सा	-	(सा)रे॒	-	ग	ग
ह	रि	ह	रि	क	र	म	न	ज	ग	में	ऽ	जी	ऽ	व	न
x				2				0				3			
(ग)रे॒	ग	प	प	प	-	म॑	ग	(ग)प	-	ग	प	ग	रे॒	सा	सा
है	ऽ	दि	न	चा	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	र
x				2				0				3			

अंतरा

(सा)रे॒	रे॒	-	सा	सा	सा	(सा)रे	ग	रे	-	सा	सा	(ग)प	ग	प	-
गु	मा	ऽ	इ	घ	रि	पा	ऽ	छी	ऽ	न	हिं	आ	ऽ	वे	ऽ
x				2				0				3			
(म॑)प	नि	ध॒	प	प	प	ग	ग	(ग)प	-	ग	प	ग	रे॒	-	सा
ह	र	रं	ग	क	र	ले	बि	चा	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	र
x				2				0				3			

निष्कर्ष

शोधार्थी द्वारा पूर्वी रागांग के विश्लेषणात्मक अध्ययन के हेतू से पूर्वी, परज, पूरिया धनाश्री, श्री, बसंत, गौरी, जैताश्री, त्रिवेणी, रेवा, मालवी, विभास (पूर्वी थाट) और ट की इन रागो का अध्ययन निम्न बिन्दूऔ के आधार पर किया गया :

१) ग्रंथो से प्राप्त जानकारी

२) विद्वानो के मत

३) स्वर विस्तार का विश्लेषण

४) बंदिशो का विश्लेषण

इस विश्लेषण के आधार पर पूर्वी रागांग वाचक कई स्वर संगतियों के द्वारा पूर्वी रागांग स्पष्ट हुआ है । सर्वप्रथम दोनो मध्यमो का प्रयोग यह पूर्वी रागांग की मुख्य विशेषता

मानी जा सकती है । इसके अलावा कई ऐसी स्वर संगतियाँ है, जिन्हे हम पूर्वी रागांग से संबंधित मान सकते है । पूर्वी रागांग वाचक स्वर संगतियों को पूर्वांग व उत्तरांग मे पृथक पृथक रूप से विभाजित किया जा सकता है, जो इस प्रकार है :

पूर्वी राग के पूर्वांग मे प्रयोग की जानेवाली रागांग वाचक स्वर संगतियाँ

१) ऩि सा रे ग

२) रे ग मं ग म रे ग

३) ऩि रे ग

४) ऩि रे ग मं प

पूर्वी राग के उत्तरांग मे प्रयोग की जानेवाली रागांग वाचक स्वर संगतियाँ :

१) ध मं ग

२) रें नि ध प

३) ध नि ध प

४) मं ध सां

इन रागांगयुक्त स्वर संगतियों का कई रागो मे पूर्ण या अंश रूप मे प्रयोग दिखाई देता है । इस विश्लेषण के आधार पर अन्य रागो मे पूर्वी रागांग का राग के पूर्वांग व उत्तरांग मे प्रयोग निम्न रूप से है :

१) परज :- पूर्वांग और उत्तरांग दोनो मे प्रयोग, लगावभेद और चलन भेद के साथ

२) पूरिया धनाश्री :- पूर्वांग व उत्तरांग दोनो मे प्रयोग

३) श्री :- श्री अंग की प्रबलता के साथ उत्तरांग मे अधिक प्रयोग

४) बसंत :- उत्तरांग मे प्रयोग

५) गौरी :- गौरी अंग की प्रबलता के साथ उत्तरांग मे अधिक प्रयोग

६) जैताश्री :- जैत और श्री अंग के साथ पूर्वांग व उत्तरांग मे प्रयोग

७) त्रिवेणी :- श्री और जैत की प्रबलता के साथ पूर्वांग व उत्तरांग मे सूक्ष्म प्रयोग

८) रेवा :- श्री अंग की प्रबलता के साथ उत्तरांग मे ध प इस स्वर संगति का पूर्वी रागांग से सूक्ष्म संबंध

९) मालवी :- श्री अंग की प्रबलता के साथ उत्तरांग मे सूक्ष्म प्रयोग

१०) विभास :- उत्तरांग मे प्रयोग

११) टंकी :- श्री अंग कीप्रबलता के साथ उत्तरांग मे सूक्ष्म प्रयोग

शोधार्थी द्वारा पूर्वी रागांग के अंतर्गत उपरोक्त रागो को निम्न रूप से वर्गीकृत किया है ।

रागांग आधारित पूर्वांग , उत्तरांग राग वर्गीकरण

पूर्वी रागांग का पूर्वांग व उत्तरांग मे प्रयोग होने वाले रागो की सूची :

१. परज २. पूरिया धनाश्री ३. जैताश्री

पूर्वी रागांग का केवल उत्तरांग मे प्रयोग होनेवाले रागो की सूची :

१. श्री २. बसंत ३. गौरी

४. विभास

पूर्वी थाट के राग एवं रागांग पूर्वी का सूक्ष्म प्रयोग होनेवाले रागो की सूची :

१. त्रिवेणी २. रेवा ३. मालवी

४. टंकी